आस्था से प्रबुद्धता की ओर

डॉक्टर अली सिना की निबंध श्रृंखला "FROM BELIEF TO ENLIGHTENMENT, WHY I LEFT ISLAM" का हिन्दी रूपांतर

रूपांतरकार: अष्टावक्र

संपादक: तुफ़ैल चतुर्वेदी

स्रोत: www.faithfreedom.org

महान ईरानी दार्शनिक व इस्लाम के निष्पक्ष समीक्षक अली सिना

मेरा जन्म एक उदारवादी परंतु धर्मनिष्ठ परिवार में हुआ था। मेरी माँ की ओर से, मेरे कुछ रिश्तेदार आयतुल्लाह थे। यद्यपि मेरे पितामह (जिनसे मैं कभी न मिल सका) कुछ-कुछ आलोचक दृष्टि रखते थे, तथापि हम सभी मोमिन थे। मेरे माता-पिता मुल्लाओं के शौकीन नहीं थे। सच तो यह है कि हम अपने अधिक कट्टर सम्बन्धियों से अधिक नाता नहीं रखते थे। हम स्वयं को 'सच्चे इस्लाम' में विश्वास रखने वाला मानते थे, जो वह नहीं था जो मुल्लाह पढ़ाते थे तथा उस पर अमल करते थे।

मुझे याद है जब मैंने अपनी बुआ के पति से धर्म के विषय पर चर्चा की थी, उस समय मैं 15 वर्ष का था। वह एक धर्मांध मुस्लिम थे जो फ़िक़्र अथवा इस्लामी न्यायशास्त्र में बहुत अधिक रुचि रखते थे। इसमें यह बताया गया है कि मुसलमानों को किस प्रकार नमाज़ पढ़नी है, कैसे उपवास रखना है, अपना सार्वजनिक तथा निजी जीवन जीना है, व्यापार करना है, स्वयं को स्वच्छ रखना है, कैसे मल-मूत्र त्याग करना है तथा यहाँ तक कैसे संसर्ग करना है। मैंने तर्क दिया कि सच्चे इस्लाम का इन सबसे कुछ भी लेनादेना नहीं है तथा यह सब मुल्लाओं की गढ़ी हुई वस्तु है। मैंने कहा कि फ़िक़्र पर बहुत अधिक ध्यान देने से इस्लाम के पवित्र संदेश-अल्लाह के साथ मनुष्य के एकाकार होने-का महत्व व प्रभाव नष्ट होने लगता है। यह

सोच अधिकांशतः सूफ़ी दर्शन से प्रेरित है। कवि रूमी के प्रभाव से अधिकतर ईरानी अपने दृष्टिकोण में बहुत हद तक सूफ़ी हैं।

युवावस्था के आरंभिक दिनों में मैंने यह देखा कि ईरान में धार्मिक अल्पसंख्यकों के विरुद्ध क्रूरता व भेदभाव किया जा रहा है। यह प्रांतों के उपनगरों में अधिक था जहाँ शिक्षा का प्रसार कम था तथा मुल्लाह की पकड़ भोली-भाली जानता पर अधिक थी। मेरे पिता के काम के कारण, हमने कुछ वर्ष, राजधानी के बाहर, छोटे उपनगरों में व्यतीत किए। मुझे स्मरण है कि मेरा एक अध्यापक तैराकी की कक्षा लेने वाला था। हम लोग उत्साहित थे तथा आशा से इस अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। कक्षा में कुछ बालक थे जो यहूदी तथा बहाई थे। अध्यापक ने उन्हें हमारे साथ नहीं आने दिया। अध्यापक ने बताया कि वे लोग उस पूल में नहीं तैर सकते जिसमें मुसलमान तैरते हों। मैं अपने मित्र बालकों की निराशा के दृश्य को भूल नहीं सकता, जब उन्होंने उस दिन स्कूल छोड़ा तो उनकी आँखों में आँसू थे, वे दबा-कुचला अनुभव कर रहे थे तथा उनका हृदय विदीर्ण था। उस समय मेरी आयु 9-10 वर्ष थी, मैं इसका कारण नहीं समझ सका तथा इन अन्याय को देखकर दुखी था। मुझे लग रहा था कि यह बच्चों की गलती थी कि वे मुस्लिम नहीं थे। मुझे लगता है कि मैं भाग्यवान था कि मेरे माता-पिता खुले दिमाग वाले

थे जिन्होंने मुझे आलोचनात्मक दृष्टि दी। उन्होंने मेरे भीतर अल्लाह तथा उसके रसूल के प्रति प्रेम उत्पन्न करने की चेष्टा की, परंतु साथ-साथ मानवीय गुणों, जैसे स्त्री-पुरुष के अधिकारों की समानता तथा सम्पूर्ण मानवता से प्रेम, को भी पुष्पित व पल्लवित किया। एक प्रकार से अधिकांश आधुनिक ईरानी परिवार ऐसे ही थे। सच तो यह है कि अधिकांश मुसलमान, जो थोड़ा बहुत शिक्षित थे, यह सोचते थे कि इस्लाम एक मानवीय धर्म है, जो मानवाधिकारों का सम्मान करता है, जो स्त्री का सामाजिक स्तर ऊंचा करके उसके अधिकारों का संरक्षण करता है। अधिकांश मुसलमान यह विश्वास करते हैं कि इस्लाम का अर्थ शांति है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इनमें से बहुत कम ने कुरान पढ़ा होगा।

मेरी युवावस्था सच्चे इस्लाम की वकालत करने तथा इस सुंदर स्वप्न को साकार करने की चेष्टा में बीती। मैं मुल्लाओं की आलोचना करता था कि उन्होंने इस्लाम की सच्ची शिक्षा से हमें दूर कर दिया है। मेरे लिए इस्लाम एक आदर्श था जो मेरे अंतस के मानवीय मूल्यों की पुष्टि करता था। निश्चय ही मेरी कल्पनाओं का इस्लाम एक सुंदर धर्म था। यह समानता तथा शांति का धर्म था। यह वह धर्म था जो अपने अनुचरों को प्रोत्साहित करता था कि वे ज्ञान पिपासु हों तथा प्रश्न पूछें। यह वह धर्म था जो विज्ञान तथा तर्क के

साथ सुसंगत था। सच तो यह है कि मैं यहाँ तक सोचता था कि विज्ञान को प्रेरणा देने वाली शक्ति इस्लाम थी। मेरे विचार में इस्लाम एक ऐसा धर्म था जो आधुनिक विज्ञान के साथ-साथ अनुप्राणित हुआ तथा जिसने अंततः अपना फलदायी प्रभाव पश्चिम में दिखाया तथा आधुनिक खोजों तथा आविष्कारों को संभव बनाया। मेरी अवधारणा में इस्लाम, आधुनिक सभ्यता का वास्तविक कारण था। मेरे विचार में, मुसलमानों का अज्ञानता की शोचनीय स्थिति में रहने का कारण, स्वरथी मुल्लाओं तथा धर्मगुरुओं की त्रुटि थी जो व्यक्तिगत लाभ के लिए, इस्लाम की शिक्षाओं की दोषपूर्ण व्याख्या कर रहे थे। वस्तुतः प्रत्येक मुसलमान ऐसा ही सोचता है। वे इस्लाम में कोई भी त्रुटि नहीं ढूँढना चाहते। जब उनके धर्म में त्रुटि दिखती है तो वे स्वयं को तथा प्रत्येक वस्तु को दोष देते हैं, न कि धर्म को।

मुसलमान सत्यनिष्ठा के साथ यह विश्वास करते हैं कि पश्चिम की महान सभ्यता की जड़ें इस्लाम में हैं। वे मध्यपूर्व के महान वैज्ञानिकों की याद दिलाते हैं जिनका विज्ञान में योगदान, आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के जन्म व विकास की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण था।

उमर खय्याम एक महान गणितज्ञ था जिसने वर्ष की लंबाई की गणना सेकंड के 0.74% की शुद्धता के साथ की थी। जकारिया

राज़ी को अनुभवजन्य विज्ञान (Empirical Science) जनक कहा जा सकता है जिसने अपने ज्ञान का आधार, शोध तथा प्रयोग को बनाया। एविसेना (अबु अली सिना) का औषधि का अविस्मरणीय विश्वकोश, यूरोप के विश्वविद्यालयों में शताब्दियों तक पढ़ाया जाता था। बहुत से और भी 'इस्लामी नामों' वाले विद्वान हैं जो आधुनिक विज्ञान के अग्रदूत थे, जब यूरोप मध्यकालीन अंधयुग में डूबा हुआ था। अन्य मुसलमानों की भांति मैं भी विश्वास करता था कि ये सभी महान व्यक्ति मुसलमान थे तथा वे कुरान में छुपी हुई ज्ञान की निधि से प्रेरित थे तथा यदि आज के मुसलमान इस्लाम की आरंभिक शुद्धता को प्राप्त कर लेते हैं तो इस्लाम के खोए हुए यशस्वी दिन वापस आ सकते हैं तथा मुसलमान एक बार फिर वैश्विक सभ्यता के अग्रदूत बन सकते हैं।

ईरान एक मुसलमान देश था, परंतु यह एक भ्रष्ट देश भी था। किसी विश्वविद्यालय में प्रवेश पाने का अवसर दुर्लभ था। 10 में से 1 आवेदक ही विश्वविद्यालय में प्रवेश पा सकता था। प्रायः उन्हें ऐसे विषय चुनने पड़ते जो वे पढ़ना नहीं चाहते थे, क्योंकि उन्हें अपने पसंद के विषय में पर्याप्त नंबर नहीं मिले होते थे। जिन विद्यार्थियों का संपर्क सूत्र अच्छा होता था, उन्हें प्रवेश मिल जाता था।

ईरान में शिक्षा का मापदण्ड ऊंचा नहीं था। विश्वविद्यालयों का वित्तीय पोषण पर्याप्त नहीं था। शाह की रुचि एक शक्तिशाली सेना बनाने की थी ताकि वह मध्यपूर्व का चौकीदार बन सके। उसकी रुचि आधारभूत ढांचा विकसित करने तथा जनशिक्षा में निवेश करने में नहीं थी। इन्हीं कारणों से मेरे पिता ने सोचा कि मेरे लिए यह बेहतर होगा कि मैं ईरान छोड़ कर अपनी शिक्षा कहीं और पूरी करूँ।

हमने अमेरिका तथा यूरोप के विषय में सोचा, परंतु मेरे पिता ने अपने कुछ धार्मिक मित्रों के सुझाव पर यह सोचा कि उनके 16 वर्षीय पुत्र के लिए कोई अन्य इस्लामी राष्ट्र बेहतर विकल्प होगा। हमें यह बताया गया कि पश्चिम की नैतिकता अत्यंत ढीली है; लोग विकृत हैं, समुद्र तट नग्नता से ओतप्रोत हैं तथा वे शराब पीते हैं तथा उनकी जीवनशैली अनैतिक है, यह सब कुछ एक युवा पुरुष के लिए घातक है। अतएव मुझे पाकिस्तान भेजा गया, जहाँ जनता धर्मपरायण थी जिसके कारण वहाँ रहना सुरक्षित तथा नैतिक मापदण्डों के अनुरूप था। हमारे एक पारिवारिक मित्र ने बताया कि पाकिस्तान, इंग्लैंड की भांति है, सिवाय इसके कि यह सस्ता है।

यह सब कुछ असत्य सिद्ध हुआ। मैंने पाया कि पाकिस्तानी उतने ही अनैतिक तथा भ्रष्ट हैं जितने ईरानी। हाँ, इतना ज़रूर था कि वे

अत्यंत धर्मनिष्ठ थे। वे सूअर का माँस नहीं खाते तथा मैंने देखा कि सार्वजनिक स्थानों पर कोई भी शराब नहीं पीता था, परंतु मैंने देखा कि उनके मन विकृत हैं, वे झूठ बोलते हैं, ढोंगी हैं तथा स्त्रियों के प्रति निर्मम हैं तथा सबसे बड़ी बात मैंने यह देखी कि **वे भारतीयों के प्रति घृणा से भरे हुए थे**। मैंने उन्हें किसी भी दृष्टि से इरानियों से बेहतर नहीं पाया। वे धर्मनिष्ठ थे, परंतु नैतिकता तथा मानवीय मूल्यों से दूर थे।

कॉलेज में मैंने, उर्दू भाषा के स्थान पर, A लेवल फ़ेलो ऑफ साइंस पाठ्यक्रम पूरा करने के लिए पाकिस्तानी संस्कृति विषय चुना। मैंने भारत से पाकिस्तान के विभाजन का कारण जाना तथा पहली बार मुहम्मद अली जिन्नाह के विषय में सुना, जिसे पाकिस्तानी कायद-ए-आज़म अर्थात, महान नेता कहते हैं। उन्हें एक बुद्धिमान पुरुष के रूप में प्रस्तुत किया गया, जो राष्ट्रपिता थे, जब कि गांधी जी के विषय में निदास्पद बातें कही गयीं। **उस समय भी मैंने स्वयं को गांधी जी के साथ खड़ा देखा तथा जिन्नाह को अहंकारी, महत्वाकांक्षी पुरुष के रूप में देखा जो राष्ट्र के विभाजन का तथा लाखों लोगों की मृत्यु का कारण था**। आप कह सकते हैं कि मेरा मन उस समय भी अपने हिसाब से ही सोचता था तथा मैं अपनी सोच में स्वच्छंद था। इससे अंतर नहीं पड़ता कि मुझे क्या पढ़ाया गया था, मैंने सदैव

अपना निष्कर्ष खुद निकाला तथा कभी भी बिना सोचविचार के पढ़ायी गयी बातों पर विश्वास किया।

मैं धार्मिक विविधता को किसी राष्ट्र के विभाजन का वैध कारण नहीं मानता। पाकिस्तान शब्द ही भारतीयों के लिए अपमानजनक है। वे स्वयं को पाक अथवा शुद्ध कहते हैं ताकि वे स्वयं को भारतीयों से पृथक दिखा सकें जो उनके लिए नजस अथवा अशुद्ध हैं। यह कैसा विरोधाभास है कि मैंने कभी भी पाकिस्तानी लोगों जैसे शारीरिक व मानसिक रूप से गंदे मनुष्य नहीं देखा। एक अन्य मुस्लिम राष्ट्र को इतनी अधिक बौद्धिक तथा नैतिक शून्यता में देखना निराशाजनक था। मित्रों के साथ चर्चा में, मैं किसी को भी 'सच्चे इस्लाम' के लक्षणों को लेकर किसी को भी आश्वस्त नहीं कर सका। मैं उनकी कट्टरता तथा धर्मांधता की निंदा करता था, जब कि वे मेरे गैर-इस्लामी विचारों के लिए मेरी भर्त्सना करते थे। मुझे अनेक वर्ष लग गए तथा बहुत अधिक अध्ययन करना पड़ा तब जाकर मुझे यह अनुभव हुआ कि वे इस्लाम के विषय में सही थे तथा मैं अज्ञानी था।

मैंने यह सब कुछ अपने पिता को बताया तथा मैंने विश्वविद्यालय की पढ़ाई के लिए इटली जाने का निर्णय लिया। इटली में, जनता अंगूर

की शराब तथा सूअर के माँस का सेवन करती थी, परंतु वे अधिक सत्कारशील, मित्रवत तथा मुसलमानों की अपेक्षा कम धूर्त थे। मैंने देखा कि लोग बिना किसी प्रत्युपकार की आशा के सहायता करने के लिए उद्यत रहते थे। मेरी भेंट एक अत्यंत सत्कारशील वृद्ध युगल से हुई, वे मुझे रविवार के दिन दोपहर के भोजन के लिए बुला लेते थे ताकि मुझे रविवार को घर में अकेले न रहना पड़े। उन्हें मुझसे कुछ भी नहीं चाहिए था। वे किसी को चाहते थे जिससे वे स्नेह कर सकें। मैं उनके लिए उनके पोते जैसा था। एक नवीन देश में, एक विदेशी व्यक्ति ही, जो न तो किसी को उस देश में जानता हो न ही वहाँ की भाषा जानता हो, स्थानीय लोगों के अतिथिसत्कार तथा सहायता के मूल्य को भलीभांति समझ सकता है। उनका घर अत्यंत स्वच्छ तथा संगमरमर की फर्श से चमत्कृत था। यह दृश्य, पश्चिमी लोगों के विषय में मेरी पूर्व अवधारणा के बिल्कुल विपरीत था। यद्यपि मेरा परिवार अन्य लोगों के प्रति अत्यंत उदार था तथापि, इस्लाम ने मुझे यह सिखाया था कि गैर-मुस्लिम नजिस अथवा नजस (कुरान 9:28) होते हैं तथा उनसे मित्रता नहीं करनी चाहिए। मेरे पास अभी भी कुरान का फारसी अनुवाद है जिसे मैं प्रायः पढ़ता हूँ। एक आयत कुछ इस प्रकार है: “हे मोमिनों! यहूदियों तथा ईसाइयों को औलिया (मित्र, संरक्षक, सहायक आदि) न बनाओ, वे परस्पर मित्र हैं..” (कुरान:5/51)

मुझे इस आयत में निहित बुद्धि को समझने में दिक्कत हुई। मैं इस सोच में पड़ गया कि इस उत्तम वृद्ध युगल से आखिर मित्रता क्यों न की जाए, जिनका मेरे प्रति उदारता दिखाने के पीछे, सिवाय मुझे अपनत्व का एहसास कराने के, अन्य किसी भी प्रकार का परोक्ष उद्देश्य नहीं है। मैंने सोचा कि वे 'सच्चे मुस्लिम' हैं तथा मैंने इस आशा में धर्म का विषय छेड़ने की चेष्टा की कि वे इस्लाम की सच्चाई देखकर इस्लाम कुबूल कर लेंगे। परंतु उनका इस विषय में रुझान नहीं था तथा विनयपूर्वक उन्होंने विषय बदल दिया। मैं अपने जीवनकाल एक दौर में जब यह सोचता था कि सभी गैर-मोमिन जहन्नुम में जाएंगे तो मैं मूर्ख नहीं था। मैंने यह कुरान में पढ़ा था, परंतु मेरे मन में कभी इस विषय में तर्क-वितर्क करने की इच्छा जागृत नहीं हुई थी। मैं इसे टाल देता था अथवा इस प्रश्न की उपेक्षा कर देता था। निश्चय ही मुझे ज्ञात था कि यदि कोई व्यक्ति अल्लाह के रसूल को मान्यता देता है तो अल्लाह प्रसन्न होता है, परंतु मैंने कभी यह नहीं सोचा था कि वह इतना क्रूर होगा कि वह किसी व्यक्ति को जहन्नुम में अनंत काल तक इसलिए जलाएगा कि वह मुस्लिम नहीं है (अल्लाह को मान्यता नहीं देता) चाहे वह व्यक्ति सदैव अच्छे कार्य करने वाला हो। मैंने निम्नलिखित चेतावनी पढ़ी: यदि किसी व्यक्ति इस्लाम (अल्लाह के प्रति समर्पण) इसे इतर धर्म

की इच्छा है जो उसके कर्म स्वीकार नहीं किये जाएंगे तथा परलोक में वह उन लोगों के बीच में होगा जो पुण्यहीन रहे थे। (कुरान:3/85)

तथापि, मैंने थोड़ा सा ही ध्यान दिया तथा स्वयं को आश्वस्त किया कि इस आयत का अर्थ वह नहीं होगा जो प्रतीत हो रहा है। उस समय मैं इस विषय पर अधिक ध्यान नहीं दे रहा था। अतएव, मैंने इसके विषय में नहीं सोचा। अधकांश मुसलमान इनकार की मनःस्थिति में रहते हैं।

मैं अपने मुस्लिम मित्रों के मध्य में विचरण करता था तथा यह देखता था कि अधिकांश अत्यंत अनैतिक जीवन जीते हैं तथा उनके मापदण्ड दोहरे थे। **अधिकांश मुसलमानों ने स्थानीय युवतियों (इटली निवासिनी) को मित्र बना लिया था तथा उनके साथ संसर्ग करते थे।** यह एक अत्यंत गैर-इस्लामी कृत्य था अथवा ऐसा मैं उस समय सोचता था। मुझे जो बात सबसे अधिक खटकती थी, वह यह थी कि **वे इन युवतियों अथवा किशोरियों को वास्तविक मनुष्य नहीं समझते थे, जिन्हें एक मानव होने के नाते कुछ सम्मान मिलना चाहिए था। यह किशोरियाँ मुस्लिम नहीं थीं, इस कारण उनका उपयोग केवल वासना की तुष्टि के लिए किया जाता था।** यह

दृष्टिकोण सभी का नहीं था। वे लोग जो कम मजहबी थे, महिलाओं के प्रति अधिक सम्मानपूर्ण थे तथा अपने पाश्चात्य नारी-मित्रों के प्रति सम्मानपूर्ण तथा निष्ठावान थे, उनमें कुछ उनसे प्रेम करते थे तथा विवाह करना चाहते थे। यह अत्यंत विरोधाभास था कि जो अधिक मजहबी थे वे अपनी महिला मित्रों के प्रति कम निष्ठावान तथा अधिकाधिक धूर्त थे। मैं हमेशा यह सोचता कि जो कुछ भी सही है वही सच्चा इस्लाम है। जब भी मेरे विचार में कोई भी वस्तु अथवा धारणा, अनैतिक, असभ्य, कपटपूर्ण तथा निर्दय लगती तो मैंने सोचता कि यह सब गैर-इस्लामी है। इसके विपरीत यदि कोई वस्तु अथवा विचार अच्छा होता तो मैं उसका श्रेय इस्लाम को देता। मुसलमान, इस्लाम के विषय में इसी प्रकार सोचते हैं, परंतु इस्लाम ऐसा नहीं है। मैं उस समय यह नहीं देख सका कि इन अनैतिक व भावनाहीन मुसलमानों का यह निंदनीय आचरण, इस्लाम की शिक्षाओं की परिणति है। उस समय मैं यह नहीं देख सका कि **मुसलमान बुरे हैं क्योंकि इस्लाम बुरा है।**

अनेक वर्षों बाद मैं यह समझ सका कि सच्चाई इसके बिल्कुल विपरीत है। मैंने अनेक ऐसी आयतें देखीं जो विचलित करने वाली थीं तथा मुझे इस्लाम के विषय में अपने सम्पूर्ण विचारों को बदलना पड़ा।

जैसा कि मैंने देखा था कि त्रासदी यह थी कि वे लोग, जो असभ्य तथा अनैतिक जीवन जी रहे थे, स्वयं को मुस्लिम कहते थे तथा अपनी प्रार्थना अथवा नमाज अदा करते थे, रोजा रखते थे तथा इस्लाम पर सवाल उठाने वाले प्रत्येक व्यक्ति के विरुद्ध रोशपूर्ण ढंग से इस्लाम की रक्षा के लिए खड़े हो जाते थे। इस्लाम के विरुद्ध कुछ भी कहने की हिम्मत करने वाले व्यक्ति के विरुद्ध अपना आपा खोने वाले तथा युद्ध के लिए तत्पर होने वाले लोगों में भी वही सबसे आगे होते थे।

एक बार मैंने विश्वविद्यालय के भोजनालय में एक युवा ईरानी पुरुष से मित्रता की तथा बाद में मैंने उसका परिचय दो अन्य मुस्लिम मित्रों से करवाया। हम सब लगभग एक ही आयुवर्ग के थे। वह अत्यंत विद्वान, गुणी तथा बुद्धिमान युवक था। मेरे अन्य दो मित्र तथा मैं उसकी विद्या की आभा तथा नैतिक आदर्शों से अभिभूत थे। हम उसकी प्रतीक्षा करते थे तथा भोजन के समय उसके निकट बैठते थे, क्योंकि सदैव हमें उससे कुछ न कुछ सीखने को मिलता था। हम बहुत सारी स्पेगेटी और रिसोट्टो (इटली के व्यंजन) खाते थे तथा हमें एक अच्छी ईरानी कोरमा सब्ज़ी और चेलोव (भाप में पकाया हुआ चावल जिसमें ऊपर केसर तथा मक्खन डाल दिया

जाता है) खाने का मन करता था। हमारे मित्र ने कहा कि उसकी माँ ने कुछ सुखी सब्ज़ियाँ भेजी हैं तथा उसने अगले रविवार को अपने घर दिन के भोजन पर बुलाया। हमने देखा कि उसका दो कमरों का घर अत्यंत स्वच्छ है, जो अन्य लड़कों कि घरों से अधिक साफ़-सुथरा लग रहा था। उसने हमारे लिए स्वादिष्ट कोरमा सब्ज़ी बनायी जिसको हमने भरपूर स्वाद लेते हुए खाया तथा फिर हम बैठ कर चाय पीने के साथ-साथ बतचीत करने लगे। इस समय हमने यह ध्यान दिया कि वहाँ बहाई धर्म की पुस्तकें रखी हुई हैं। जब हमने उन पुस्तकों के विषय में पूछा तो उसने बताया कि वह बहाई है।

इससे मुझे कोई अंतर नहीं पड़ा, परंतु वापसी के मार्ग पर मेरे दो अन्य मित्रों ने कहा कि वे उसके साथ अपनी मित्रता को आगे नहीं बढ़ाना चाहते। मैं आश्चर्य में आकर पूछा, क्यों? उन्होंने कहा कि बहाई होने के कारण वह नजस अथवा नजिस (गंदा) है तथा यदि उन्हें पूर्व में ज्ञात होता कि वह बहाई है तो वे उससे मित्रता न करते। मैं असमंजस में था तथा यह जानना चाहता था कि क्यों मेरे ये दो मुस्लिम मित्र उसे नजिस समझते हैं यदि हम सब उसकी स्वच्छता की प्रशंसा करते हैं। हम तीनों में इस बात पर सहमति थी कि वह नैतिक दृष्टि से किसी भी मुस्लिम पुरुष से, जिन्हें हम अब

तक जानते हैं, श्रेष्ठतर पुरुष है, तो फिर सहसा दृष्टिकोण में यह परिवर्तन क्यों? उनका उत्तर अत्यंत विकल करने वाला था। उन्होंने कहा कि बहाई नाम में ही कुछ ऐसा है कि उन्हें इस धर्म से घृणा होती है। उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या मुझे ज्ञात है कि क्या कारण है कि हर कोई बहाई धर्म तथा धर्मावलंबियों से घृणा करता है? मैंने उनसे कहा कि मुझे यह ज्ञात नहीं है तथा मैंने यह भी कहा कि मैं हर किसी को पसंद करता हूँ। परंतु क्योंकि वे बहाई लोगों को नापसंद करते थे, अतएव उन्हें ही इसका कारण बताना होगा। उन्हें खुद इस घृणा का कारण नहीं पता था! यह पहला बहाई था जिसे वे इतनी निकटता से जानते थे तथा वह एक असाधारण पुरुष था। मैं उनकी घृणा का कारण जानना चाहता था। उन्होंने बताया कि इसका कोई विशिष्ट कारण नहीं था। उन्हें केवल इतना पता था कि बहाई बुरे होते हैं।

मैं खुश हूँ कि मैंने इन धर्मांध मित्रों के साथ अपनी मित्रता आगे नहीं बढ़ायी। मैं उन लोगों से यह समझ सका कि किस प्रकार पूर्वाग्रह जन्म लेता है तथा कैसे कार्य करता है। बाद में, मुझे यह अनुभव हुआ कि मुसलमानों के मन में लगभग सभी गैर-मुस्लिमों के प्रति घृणा का कारण कुरान की शिक्षाओं की त्रुटिपूर्ण व्याख्या नहीं है, परंतु इसका कारण कुरान में अंतर्निहित घृणा के उपदेश हैं जो

पूर्वाग्रह को जन्म देते हैं। वे मुसलमान, जो मस्जिद जाते हैं तथा मुल्लाओं के उपदेशों को सुनते हैं, दुष्प्रभावित हो जाते हैं। **कुरान में अनेकों ऐसी आयतें हैं जो मोमिनों का आह्वान करती हैं कि वे गैर-मोमिनों से घृणा करें, उनसे युद्ध करें, उन्हें नजिस कहें, उन्हें नीचा दिखाएं तथा उन्हें अपमानित करें, उनके हाथ तथा अंग काट लें, उन्हें सूली पर चढ़ा दें तथा जहाँ कहीं भी वे मिलें, उन्हें मार डालें।**

मैंने कुरान से सच्चाई को जाना

मैंने धर्म को अनेक वर्ष पूर्व ही हाशिये पर रख दिया था। ऐसा नहीं था कि धर्म को लेकर मेरे विचार बदल गए थे अथवा मैं अपने आप को धर्म से परे कर लिया था। मेरे पास बहुत काम था तथा धर्म के ऊपर कार्य करना दुर्लभ हो रहा था। इस बीच, मैंने लोकतंत्र, मानवाधिकार तथा अन्य नैतिक मूल्यों के विषय में पढ़ा जैसे स्त्री-पुरुष के मध्य अधिकारों की समानता तथा मुझे इस अध्ययन में रस मिल रहा था। क्या मैं इस दौरान नमाज पढ़ता था? जब कभी भी समय मिलता था मैं नमाज पढ़ता था, परंतु मैं धर्मांध नहीं था। जो भी हो, मैं एक पाश्चात्य देश में कार्य कर रहा था तथा वहाँ रह भी रहा था तथा अन्य लोगों से बहुत अधिक भिन्न नहीं दिखना चाहता था।

एक दिन, मैंने निर्णय लिया कि मैं इस्लाम के विषय में अपने ज्ञान को बढ़ाऊँगा तथा मैंने कुरान को आद्योपांत पढ़ डाला। मुझे कुरान की एक अरबी प्रति मिली जिसमें साथ में अंग्रेजी अनुवाद भी दिया हुआ था। इससे पूर्व मैंने कुरान के कुछ अंश ही पढ़े थे। इस बार मैंने इसे पूरा पढ़ा। मैं एक आयत अरबी में पढ़ता तथा फिर इसका अंग्रेजी अनुवाद पढ़ता था फिर दोबारा अरबी देखता था तथा अगली आयत पर तभी जाता था जब इस आयत को पूरा समझ लेता था।

मुझे अधिक समय नहीं लगा जब मैं ऐसे आयतों से रूबरू हुआ जिन्हें पचा पाना कठिन था। इनमें से एक आयत कुछ इस प्रकार थी: *"अल्लाह उन लोगों को क्षमा नहीं करता जो उसको किसी और के साथ साझा करते हैं, परंतु वह और कुछ भी अपनी मर्जी से क्षमा कर सकता है। अल्लाह के साथ किसी को शरीक करना सबसे घृणित पाप है।* (कुरान: 4/48)

मेरे लिए यह स्वीकार करना कठिन था कि गांधी जी, हमेशा के लिए जहन्नुम में जलते रहेंगे, क्योंकि वह बहुदेववादी थे तथा इस कारण उनके उद्धार अथवा पापविमोचन की कोई आशा नहीं थी, जब कि दूसरी ओर एक मुस्लिम हत्यारा अल्लाह की क्षमा की आशा कर सकता था। इससे एक विकल करने वाला प्रश्न कौंधा। अल्लाह

इतना बेचैन क्यों है कि उसे ही अकेला ईश्वर माना जाए? यदि उसके सिवा और कोई ईश्वर नहीं है तो फिर इसमें इतनी खास बात क्या है? वह किसके साथ प्रतिस्पर्धा कर रहा है? उसे इस बात की चिंता क्यों है कि कोई उसे जाने तथा स्तुति करे; यदि नहीं करता तो फिर क्या?

यह तर्कशील सोच थी। हम यह कह सकते हैं कि एक पति अत्यंत ईर्ष्यालु है तथा अपनी पत्नी से कहता है कि यदि तुम किसी दूसरे पुरुष को देखोगी तो फिर मैं तुम्हें पीटूँगा। यह कितनी निम्न सोच है। परंतु सोचो यदि एक दंपति एक द्वीप में रहता है जहाँ स्त्री के लिए पति के सिवा किसी अन्य पुरुष का अस्तित्व नहीं है। यह पागलपन नहीं होगा, यदि पति ऐसे पुरुषों से ईर्ष्या करे जिनका अस्तित्व नहीं हो? यदि अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं है तो फिर क्यों वह इतना पगलाया हुआ है? ऐसा प्रतीत होता है कि अल्लाह एक स्थिरचित्त ईश्वर नहीं है। इस्लामी शहादा-अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं है- की शुरुआत अत्यंत मूर्खतापूर्ण है। यदि अल्लाह को ज्ञात है कि उसके सिवा कोई ईश्वर नहीं है तो फिर क्यों इस बात को लेकर वह इतना असक्तिपूर्ण क्यों है।

मैंने ब्रह्मांड के आकार के विषय में सोचा। प्रकाश को, जो 3 लाख किलोमीटर प्रति सेकंड की रफ्तार से चलता है, ब्रह्मांड के छोर पर

स्थित आकाशगंगा से हम तक पहुँचने में 40 बिलियन वर्ष लगते हैं। अंतरिक्ष में कितनी अकाशगंगायें हैं तथा इनमें से प्रत्येक आकाशगंगा में कितने तारे हैं? इस ब्रह्मांड में कितने गृह हैं? यह सब प्रश्न सर चकराने वाले हैं। यदि अल्लाह इस विशाल ब्रह्मांड का रचयिता है तो वह इस बात को लेकर क्यों बेचैन है कि एक तुच्छ गृह के तुच्छ प्राणियों द्वारा उसकी पूजा हो रही है अथवा नहीं?

अब जब कि मैं पश्चिम में रह चुका हूँ, मेरे अनेक पाश्चात्य मित्र हैं जो मेरे प्रति कृपालु थे, मुझे पसंद करते थे, उन्होंने अपने हृदय तथा घर के द्वार मेरे लिए खोल दिए थे तथा मुझे अपने मित्र के रूप स्वीकार किया, तो मुझे यह हजम करना कठिन हो रहा है कि अल्लाह यह नहीं चाहता कि मैं उनके साथ मित्रता रखूँ।

“मोमिनों के लिए यह उचित नहीं कि वे गैर-मोमिनों के साथ मित्रता रखें अथवा उनकी सहायता लें, यदि कोई ऐसा करता है तो अल्लाह उसकी सहायता नहीं करेगा।” कुरान: 3/28

क्या अल्लाह, गैर-मोमिनों का रचनाकार नहीं है? क्या वह हर किसी का ईश्वर नहीं है? उसे गैर-मोमिनों के लिए इतना अधिक निर्मम क्यों होना चाहिए? क्या यह बेहतर नहीं होता यदि मुसलमान, काफ़िरों के

साथ मित्रता करते तथा अपने अच्छे आचरण से उन्हें इस्लाम की सीख देते? हम स्वयं को गैर-मोमिनों से दूर रख कर, आपसी मतभेद कभी दूर नहीं कर सकते। विश्व का कोई गैर-मोमिन, इस्लाम के विषय में किस प्रकार जान सकता है यदि हम उनके साथ सहयोग नहीं करते? इस प्रकार के प्रश्न प्रायः मैं अपने आप से पूछता रहता था। इन प्रश्नों का उत्तर एक अत्यंत निराशाजनक आयत में दिया गया है। अल्लाह ने आदेश दिया है, *"जहाँ कहीं भी उन्हें पाओ, मार डालो।"* (कुरान: 2/191) यह तो नितांत पागलपन है। क्या मैं अल्लाह से अधिक बुद्धिमान हूँ? निश्चय ही ऐसा लगता है। यह कहना, 'जहाँ कहीं पाओ मार डालो" एक मंदबुद्धि की मिसाल है, चाहे किसी ने भी ऐसा कहा हो। क्या यह अल्लाह के शब्द हैं अथवा अल्लाह को इसका मिथ्या श्रेय दिया गया है? यह वह प्रश्न है जो मेरे मन-मस्तिष्क में उबाल ले रहा था, जब मैं कुरान पढ़ रहा था।

.

मैंने अपने मित्रों के विषय में सोचा, उनकी दयालुता के विषय में सोचा तथा मेरे प्रति उनके प्रेम के विषय में सोचा तथा मुझे अचरज हुआ कि इस विश्व में क्या सच्चा ईश्वर ऐसा कहेगा कि एक मनुष्य, किसी दूसरे मनुष्य को केवल इसलिए मार डाले कि दूसरा मनुष्य विश्वास (अल्लाह में) नहीं करता। यह अत्यंत बेतुकी बात थी। परंतु

इस विचारधारा को कुरान में इतनी अधिक बार दोहराया गया है कि इसके विषय में कोई संदेह नहीं रह जाता। कुरान: 8/65 में अल्लाह अपने रसूल से कहता है: “हे रसूल अल्लाह! मोमिनों को प्रेरित करो कि वे लड़ें। यदि 20 उद्यमी तथा धैर्य रखने वाले मोमिन होंगे तो वे 200 गैर-मोमिन पर भारी पड़ेंगे तथा यदि 100 होंगे तो वे 1,000 गैर-मोमिनों को जीत लेंगे।

मुझे अचरज होता है कि क्यों अल्लाह अपने रसूल को युद्ध लड़ने के लिए भेजेगा। क्या अल्लाह को हमें यह शिक्षा नहीं देनी चाहिए कि हम एक दूसरे से प्यार करें तथा एक दूसरे के विचारों के प्रति सहिष्णु रहें? यदि अल्लाह को इतना अधिक और इस सीमा तक व्याकुलता है कि लोग उस पर विश्वास करें कि वह ऐसे लोगों को मार डालना चाहता है जो उस पर विश्वास नहीं करते हैं तो यह मार डालने का काम स्वयं क्यों नहीं करता? वह यह घृणित कार्य करने के लिए हमसे क्यों कहता है? क्या हम अल्लाह के सुपारी पर किसी का भी कत्ल करने वाले बंदे हैं।

यद्यपि मुझे जिहाद के विषय में पता था तथा मैंने कभी भी पूर्व में इसका विश्लेषण नहीं किया था तथापि, मुझे यह स्वीकार करना कठिन लग रहा था कि अल्लाह इतने हिंसक उपाय अपनी अनुचर

जनता को सुझाएगा। सबसे चौंकाने वाली बात, अल्लाह द्वारा निर्दिष्ट, मोमिनों के प्रति निर्ममता का व्यवहार था।

मैं गैर-मोमिनों के हृदय में आतंक पैदा कर दूंगा: तुम उनकी गर्दन पर वार करो (सर तन से जुदा कर दो) तथा उनकी सारी उँगलियाँ काट डालो। (कुरान: 8/12)

ऐसा प्रतीत होता है कि अल्लाह, गैर-मोमिनों की हत्या करके ही संतुष्ट नहीं था, वह हत्या से पूर्व उन्हें यंत्रणा देना चाहता था। किसी का सर तन जुदा करना तथा उँगलियाँ काट डालना, अत्यंत निर्मम कृत्य हैं। क्या अल्लाह वास्तव में ऐसे आदेश देगा? इससे भी बुरा वह है जो अल्लाह ने गैर-मोमिनों के लिए परलोक में आरक्षित कर रखा है:

ये दोनों शत्रु (मोमिन व गैर-मोमिन) अपने-अपने अल्लाह के विषय में परस्पर बहस करते हैं: परंतु जो अल्लाह के अस्तित्व से ही इनकार करते हैं-उनके लिए आग का वस्त्र निर्मित किया गया है: उनके सर पर खौलता हुआ पानी डाला जाएगा। उनका शरीर तथा चमड़ी झुलस जाएगी। इसके अतिरिक्त लोहे की गदाओं से उन्हें दण्ड दिया जाएगा। हर बार जब पीड़ा के कारण उनकी इच्छा उस स्थान से

हटने की होगी तो उन्हें मार पीट कर फिर वहीं धकेल दिया जाएगा। और (यह कहा जाएगा), "जलने की सज़ा का स्वाद लो!" (कुरान: 22/19-22)

ब्रह्मांड का रचयिता इतना अधिक निर्दयी कैसे हो सकता है? मैं सकते में आ आया जब मैंने कुरान से यह सीखा कि यह मुसलमानों का आह्वान करता है:

1. गैर-मोमिनों अथवा काफ़िरों को, जहाँ पाओ मार डालो। (कुरान: 2/191)
2. ऊनकी हत्या कर दो तथा उनके साथ दंभ के साथ पेश आओ (कुरान: 9/123)
3. उनसे युद्ध करो (कुरान 8/65), जब तक कि इस्लाम के सिवा सब धर्म समाप्त हो जाएं तथा केवल इस्लाम ही शेष रहे। (कुरान: 2/193)
4. उन्हें अपमानित करो तथा उनके ऊपर दंडात्मक जज़िया कर लगाओ यदि वे यहूदी अथवा ईसाई हैं। (कुरान: 9/29)
5. यदि वे बहुदेववादी हैं तो उनकी हत्या कर दो (कुरान: 9/5) अथवा उन्हें सलीब पर ठोंक कर मार डालो अथवा हाँथ और पाँव काट डालो। (Quran: 5/33)

6. उन्हें अपमानित करके उनकी धरती से निष्कासित कर दो। शायद इतना काफ़ी नहीं था तो अल्लाह कहता है: "उन्हें परलोक में भयंकर दण्ड मिलेगा। (कुरान: 5/34)
7. अपने माता-पिता को भी मित्र न बनाओ यदि वे मोमिन नहीं हैं। (कुरान: 9/23), (कुरान 3:28)
8. ,,मुसलमानों ने अपने ही परिवार के लोगों को बदर तथा उहुद की लड़ाई में मार डाला फिर भी अल्लाह मुसलमानों का आह्वान करता है: "काफ़िरों के विरुद्ध युद्ध करने की पूरी चेष्टा करो।" (कुरान: 25/52)
9. उनके साथ निष्ठुर रहो क्यों कि वे जहन्नुमी हैं। (कुरान: 66/9)

किस प्रकार कोई संवेदनशील व्यक्ति भावहीन रह सकता है जब वह यह देखता है कि कुरान कहती है: *"गैर-मोमिनों का सर तन से जुदा कर दो।" फिर यह कहता है, "एक भीषण नरसंहार के बाद, सावधानी से बचे हुए बंदियों को बांध दो।" (कुरान: 47/4)*

मैं यह जानकर अत्यंत सदमे में था कि कुरान किसी को भी आस्था की स्वतंत्रता नहीं देता तथा स्पष्ट रूप से कहता है कि इस्लाम ही स्वीकार्य धर्म है। (कुरान: 3/85) अल्लाह कुरान पर विश्वास नहीं

करने वालों के लिए जहन्नुम का प्रबंध करता है (कुरान: 5/11) तथा उन्हें नजिस (गंदा, अस्पृश्य) कहता है (कुरान" 9/28)। वह कहता है कि गैर-मोमिन जहन्नुम में जाएंगे तथा वहाँ उबलता हुआ पानी पियेंगे (कुरान: 14/17)। परंतु अल्लाह की परपीड़न की प्रवृत्ति का कोई अंत नहीं है। वह गैर-मोमिनों से दृढ़ संकल्प के साथ कहता है, "गैर-मोमिनों के लिए आग के वस्त्र निर्मित किये जाएंगे तथा उनके सर पर उबलता हुआ पानी डाला जाएगा जिसके कारण जो कुछ भी उनके भीतर तथा चमड़ी में होगा, गल जाएगा तथा इसके बाद उन्हें लोहे की छड़ों से पीटा जाएगा जिसके सिरे नुकीले तथा घुमावदार होंगे (कुरान: 22/9)। यह कैसा परपीड़न है?

जब मैं और पढ़ने लगा तो मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचने लगा कि इस्लाम में जो कुछ भी बुरा है वह कुरान के कारण है। दुष्ट मुल्लाह जो अपने मुख से घृणा की बातें करते हैं वे पथभ्रष्ट नहीं हैं। वे "अच्छे मुसलमान हैं" तथा वे वही कर रहे हैं जो मुहम्मद ने उनसे करने को कहा था। वास्तव में मैं ही अज्ञानी था।

अल्लाह की पुस्तक कहती है कि स्त्रियाँ, पुरुषों से हीन होती हैं तथा उनके पतियों को यह अधिकार है कि वे उन्हें पीट सकें (कुरान: 4/34) तथा यदि स्त्रियाँ अपनी पति की आज्ञा नहीं मानती तो वह

जहन्नुम में जाएंगी (कुरान: 66/10)। यह कहती है कि पुरुषों को स्त्रियों के ऊपर वरीयता है (कुरान: 2/228)। न केवल यह स्त्रियों को उत्तराधिकार में समानता का अधिकार नहीं देती (कुरान: 4/11-12), यह उन्हें जड़बुद्धि मानती है तथा यह निर्देश देती है कि उनकी अकेले की गवाही, न्यायालयों में स्वीकार्य नहीं होगी (कुरान: 2/282)। इसका तात्पर्य यह हुआ कि बलात्कृत स्त्री अपने बलात्कारी को आरोपित नहीं कर सकती जब तक कि वह इस कृत्य के पुरुष गवाह सामने नहीं लाती, जो एक विद्रूपता के सिवा और कुछ नहीं। बलात्कारी अपना काम साक्षियों की उपस्थित में नहीं करते हैं। परंतु सबसे अधिक दिल दहला देने वाली आयत वह है जिसमें अल्लाह मुसलमानों को यह अनुमति देता है कि वे युद्ध में बंदी बनायी गयी स्त्रियों के साथ बलात्कार कर सकते हैं चाहे वे बंदी बनाए जाने से पूर्व विवाहित ही क्यों न हों (कुरान: 4:24) (कुरान: 4:3)

जब मैंने मुहम्मद की जीवनी पढ़ी तो मैंने जाना कि पवित्र पैगंबर सदैव हमलों के दौरान अधिकृत बस्तियों से सबसे खूबसूरत औरत को अपने लिए चुन लेता था तथा उनका बलात्कार करता था। ऐसे भी दृष्टांत हैं जब उसने हमले वाले दिन स्त्री के पति तथा अन्य कुटुंबियों की हत्या की तथा उसी दिन उस स्त्री के साथ बलात्कार

किया। यही कारण है कि जब मुसलमान किसी राष्ट्र पर हमला करते हैं तो उसे काफिर कहते हैं ताकि युद्ध के बाद उस राष्ट्र की स्त्रियों के साथ बलात्कार किया जा सके। **पाकिस्तानी सेनाओं ने 1971 में, 250,000 (ढाई लाख) बंगाली स्त्रियों का बलात्कार किया तथा लगभग 3,000,000 (30 लाख) निहत्थे नागरिकों की हत्या की थी जब उनके धार्मिक नेता ने यह आदेश दिया कि बांग्लादेशी जनता गैर-इस्लामी है।** यही कारण है कि इस्लामी राज्य ईरान में जेल के चौकीदार स्त्रियों को धर्मच्युत अथवा मुरतद तथा अल्लाह का शत्रु करार देते हैं फिर उनका (बंदी स्त्रियों का) बलात्कार करते हैं, फिर उन्हें मार डालते हैं। यही सब कुछ मुहम्मद ने भी किया था। कोई भी जो उसका विरोध करता था, वह अल्लाह का विरोधी माना जाता था तथा उसका कत्ल करना हलाल हो जाता था।

सम्पूर्ण कुरान ऐसे आयतों से भरी पड़ी है जहाँ गैर-मुस्लिमों अथवा काफ़िरों का कत्ल करने की शिक्षा दी गयी है तथा यह बताया गया है कि अल्लाह काफ़िरों की मृत्यु के बाद परलोक में उन्हें किस प्रकार यंत्रणा देगा। इसमें किसी भी प्रकार की नैतिकता, न्याय, पारदर्शिता अथवा प्रेम की शिक्षा नहीं है। कुरान का केवल एक ही संदेश है: अल्लाह तथा उसके रसूल पर विश्वास करो। कुरान सामान्य जनता को जन्नत की दिव्य वासना का स्वप्न दिखा कर लुभाता है जहाँ जन्नत

की सुंदरियों अर्थात हूरों के साथ असीमित मैथुन के अवसर हैं, परंतु अविश्वासी लोगों के लिए जहन्नुम की धधकती ज्वाला में अनंत काल तक जलने की धमकी है। जब कुरान नीति परायणता की बात करता है तो यह वह नीति परायणता नहीं है जिससे हम परिचित हैं वरन इसका निहितार्थ यह है कि हम वह करें जो मुहम्मद हमें करने के लिए कहता है, जो नीति तथा न्याय से कोसों दूर है। एक मुसलमान हत्यारा हो सकता है तथा वह गैर-मुस्लिमों की हत्या कर सकता है तथापि, उसे न्यायप्रिय अथवा नीतिपारायण कहा जाएगा। अच्छे कार्य जिन्हें हम सामान्यतः अच्छे समझते हैं वे दोयम दर्जे पर रखे गए हैं। सच तो यह है कि अच्छे कर्मों का कोई महत्व नहीं है। अल्लाह तथा उसके रसूल पर विश्वास ही एक व्यक्ति के जीवन का अंतिम उद्देश्य है।

कुरान पढ़ने के बाद मैं गहरे अवसाद में था। यह सब कुछ स्वीकार करना कठिन था। यह पुस्तक विकृत है तथा मुझे यह स्वीकार करने में बहुत समय लगा कि इतनी सारी बुराइयाँ इसमें कैसे हो सकती हैं। मैं एक ऐसा व्यक्ति हूँ जो प्रेम की भावना में बह जाता हूँ; मेरे लिए हिंसा एक बेचैन कर देने वाली विचारधारा है। प्रथमतः मैंने जो कुछ भी पढ़ा तथा समझा उससे इनकार करने की चेष्टा की तथा कुरान की इन कुत्सित आयतों के अनोखे अर्थों की खोज की जिनकी

इसमें भरमार है। मेरे प्रयत्न निरर्थक सिद्ध हुए। इन आयतों की किसी प्रकार की त्रुटिपूर्ण व्याख्या नहीं कि गयी थी। कुरान अमानवीयता से ओतप्रोत है। निश्चय ही इसमें अनेक वैज्ञानिक विसंगतियाँ तथा अन्य मूर्खताएं हैं, परंतु जिस बात ने मुझे झिंझोड़ डाला वह इस पुस्तक में अंतर्निहित हिंसा का आह्वान है जिसने मेरे विश्वास की नींव हिला दी।

मैंने अंग्रेजी तथा फ़ारसी अनुवादों की सहायता से कुरान का अध्ययन किया। मैंने यह देखा कि अंग्रेजी अनुवाद त्रुटिहीन नहीं है। अनुवादक ने अपनी पूरी कोशिश की है कि वह कुरान की निर्ममता तथा मूर्खता को छुपा ले जाए; इस उद्देश्य से अनुवादक ने शब्दों के अर्थ को तोड़मरोड़ कर प्रस्तुत किया है तथा कोष्ठकों में चाशनी में डूबा हुई व्याख्या डाल दी है। मैंने अन्य अंग्रेजी अनुवादों को देखा तथा सभी में यही धूर्तता दिखायी पड़ी। अनुवादकों को यह ज्ञात था कि गैर-मुस्लिम भी इन अनुवादों को पढ़ेंगे तथा इस कारण उन्होंने भरसक प्रयास किया कि वह भावी गैर-मुस्लिम पाठकों को भ्रमित कर सकें। कुरान का फ़ारसी अनुवाद ऐसे बाध्यताओं से मुक्त था तथा इसने कुरान की मौलिक विकृति कायम रखी।

प्रबुद्धता का संदेश देने वाला धूर्ततापूर्ण गद्यांश

कुरान के साथ मेरे कटु अनुभवों के बाद मैंने देखा कि मैं एक यंत्रणापूर्ण मार्ग से होकर गुजर रहा हूँ जहाँ पग-पग पर एक नई पीड़ा का प्रावधान है। मुझे अज्ञानता के आनंदमय उद्यान से धक्का मार कर बाहर कर दिया गया। अब मुझे मेरे प्रत्येक प्रश्न के उत्तर मिलने लगे। पहले मुझे सोचने की ज़रूरत नहीं रहती थी बस आँख मूँद कर विश्वास करना होता था। अब अज्ञानता रूपी उद्यान के द्वार सदा के लिए बंद हो चुके थे। अब मैंने विचार-विश्लेषण रूपी अकल्पनीय पाप करने का संकल्प ले लिया। मैंने ज्ञान के निषिद्ध वृक्ष का फल चख लिया तथा मेरी आँखें खुल चुकी थीं। मैंने त्रुटियों को देखने की तथा अपनी नग्न को देखने की क्षमता विकसित कर ली थी। मुझे यह ज्ञात हो चुका था कि मैं दोबारा उस अज्ञानता के स्वर्ग में प्रवेश नहीं करूंगा। एक बार आप सोचना शुरू कर देते हैं तो फिर आप जड़ नहीं रहते। मुझे केवल आगे जाना था और वही मेरा मार्ग था।

प्रबुद्धता का यह मार्ग आशा से भी अधिक दुष्कर था। यहाँ फिसलन थी। यहाँ पर्वतों जितनी ऊंची बाधाएं थीं जिन पर चढ़ना था तथा तीव्र ढाल पर गिरने से बचना था। मैं वीरानों में अकेला चल रहा था, मुझे यह ज्ञात नहीं था कि आगे मुझे क्या मिलेगा। यह प्रबोधन तथा सत्यशोधन की विधा में एक गाथा बनने जा रही थी,

अंततोगत्वा मैं प्रबुद्धता तथा स्वतंत्रता की भूमि की ओर पहुँच रहा था।

मैं इन वीरानों का मानचित्र निर्मित कर दूंगा ताकि वे लोग जो सोचने का पाप करते हैं, उन्हें भी अज्ञानता के स्वर्ग से बाहर निकलने का अवसर मिल सके तथा वे अज्ञात गंतव्य की ओर आगे बढ़ सकें।

यदि आप संदेह करते हैं, यदि आपकी अज्ञानता का वस्त्र तार-तार हो गया है तथा आप स्वयं को नग्न पाते हैं तो फिर आप अज्ञानता के स्वर्ग में लंबे समय तक नहीं रह सकते। अब आपको सदैव के लिए एक नए रूप में ढाल लिया गया है। जिस प्रकार शिशु, माँ के गर्भ से एक बार बाहर आता है तो दोबारा भीतर नहीं जा सकता, इसी प्रकार दोबारा अब आप अज्ञानता के आनंदमय स्वर्ग में प्रवेश नहीं कर सकते। अपनी अंतरात्मा की सुनो जो तुम्हारे अंतस में है तथा स्वर्ग के द्वार पर हसरत से मत चिपको। उस द्वार पर ताला लग चुका है।

इसके बजाय, आगे देखो। आपके सामने एक प्रशस्त मार्ग है। आप अपने गंतव्य तक उड़कर पहुँच सकते हैं अथवा रेंग-रेंग कर भी पहुँच सकते हैं। मैं रेंगता रहा! परंतु क्योंकि मैं रेंगता रहा इस कारण मैं इस

मार्ग से भलीभांति परिचित हूँ। मैंने मार्ग की निशानदेही कर ली है, इसलिए मैं आशा करता हूँ कि अब आपको इस मार्ग पर रेंगकर नहीं चलना होगा।

आस्था से प्रबुद्धता के मार्ग में 7 घाटियां आती हैं:

1. **सदमा:** कुरान पढ़ने के बाद यथार्थ के विषय में मेरे दृष्टिकोण में झंझावात आ गया। मैंने स्वयं को सत्य के सम्मुख पाया तथा मैं उसकी ओर देखने से डर रहा था। निश्चय ही यह वह नहीं था जो मैं देखना चाह रहा था। मैं किसी को दोष नहीं दे सकता था, किसी को कोस नहीं सकता था तथा किसी को झूठा भी नहीं कह सकता था। कुरान को पढ़ने के बाद इसके रचयिता की अमानवीयता तथा इस्लाम की बेहूदगी मेरे सामने स्पष्ट हो गयी थी। मैं सदमे में था। इस सदमे के कारण ही मैं अपने होश में आया तथा सत्य का सामना कर सका। दुर्भाग्यवश यह एक अत्यंत कठिन तथा पीड़ादायक प्रक्रिया है। मुहम्मद के अनुचरों को इस नग्न सत्य को देखना चाहिए तथा इसे देख कर भी चौंकेंगे। हम सत्य पर चाशनी का लेप नहीं लगा सकते। सत्य कटु है तथा इसे स्वीकार करना चाहिए। तथ्य

दृढ़ता के साथ खड़े हैं तथा डिगने का नाम नहीं ले रहे हैं। इस मनःस्थिति में ही प्रबुद्धता की प्रक्रिया का आरंभ होता है।

परंतु क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की संवेदनशीलता भिन्न होती है, जो घटना एक व्यक्ति को हैरत में डाल सकती है वह अन्य के लिए सामान्य हो सकती है। एक पुरुष होने के बावजूद मुझे यह हैरत वाली बात लगी कि मुहम्मद ने अपने अनुचरों से अपनी पत्नियों को पीटने को कहा तथा स्त्रियों को "बुद्धि में कमतर" माना। तथापि, मैं अनेक ऐसी मुस्लिम स्त्रियों से मिला जिन्हें उनके रसूल द्वारा निर्दिष्ट इन अपमानजनक कथनों पर कोई आपत्ति नहीं थी। ऐसा नहीं है कि वे यह स्वीकार करती हैं कि वास्तव में वे बुद्धि में कमतर हैं अथवा उन्हें विश्वास है कि जहन्नुम के अधिकांश निवासी स्त्रियाँ हैं केवल इसलिए कि रसूल अल्लाह ने ऐसा कहा है, परंतु वे निश्चय ही इस 'तथ्य' की ओर देखना ही नहीं चाहतीं। वे इन आयतों को पढ़ती हैं, परंतु उनके मन में उसका निहितार्थ नहीं घुसता। वे इनकार की मुद्रा में होती हैं। इनकार एक ऐसी ढाल है जो उन्हें इस गंद को ढँकने तथा संरक्षित करने में मदद करती है, जिसके कारण वे

वास्तविकता के दर्द का सामना करने से बच जाती हैं। एक बार यह ढाल धारण कर ली, फिर इसे हटाना बहुत कठिन है। इस बिन्दु पर उनकी आस्था पर अन्य दिशाओं से हमला होना चाहिए। हमें उन पर कुरान की अन्य निकृष्ट आयतों की बमवर्षा करनी चाहिए जो अपनी प्रकृति में और भी झिंझोड़ने वाली हैं। उनके हृदय में किसी एक आयत के लिए कोई विनम्र भाव हो सकता है। यही उन्हें चाहिए, एक झटका। अच्छा झटका दर्दनाक होता है, परंतु यह प्राणरक्षक हो सकता है। डॉक्टर झटके का प्रयोग मृत रोगी के जीवन को वापस लाने के लिए भी कर सकते हैं।

पहली बार इंटरनेट ने शक्ति संतुलन बदल दिया है। अब बंदूकों का घातक बल तथा मारक दस्ते असहाय हो चुके हैं तथा कलम ही सर्वशक्तिशाली है। यह प्रथम अवसर है कि मुसलमान सत्य को उजागर करने वाले व्यक्ति की हत्या करके सत्य को बाहर आने से रोक नहीं पा रहे हैं। बहुत से मुसलमानों को अब सत्य का सामना करना पड़ रहा है तथा वे असहाय हैं। वे सत्य की वाणी के स्रोत का अंत करना चाहते हैं, परंतु हाथ मल कर रह जा रहे हैं। वे उन वेबसाईट को निषिद्ध करना चाहते हैं जहाँ से उनके हृदय

की गहराई में बैठी हुई आस्था की गंद को खोल-खोल कर दिखाया जा रहा है। कभी-कभी उन्हें सफलता मिलती है, परंतु अधिकांशतः वे अपनी चेष्टाओं में विफल रहते हैं। मैंने एक वेबसाईट का निर्माण किया है ताकि मुसलमानों को सच्चे इस्लाम के विषय में जानकारी दे सकूँ। मैंने इस वेबसाईट को Tripod.com पर चालू किया। इस्लामी अतिवादियों ने Tripod.com को विवश कर दिया कि वह मेरी वेबसाईट को बंद कर दे और उन्होंने कायरता का परिचय देते हुए, मुस्लिम तुष्टीकरण की खातिर ऐसा ही किया। मैंने अपने वेबसाईट तथा डोमेन को दो सप्ताह में फिर से चालू कर दिया। इस प्रकार धर्मच्युत व्यक्तियों की हत्या कर देना, उनकी पुस्तकों को जला देना तथा आतंक से चुप करने की तरकीब अब कारगर नहीं है। वे लोगों को पढ़ने से नहीं रोक सकते। यद्यपि मेरी वेबसाईट सऊदी अरब, अमीरात तथा अन्य इस्लामी देशों में प्रतिबंधित है तथापि, एक बड़ी संख्या में मुसलमान, जिन्हें इस्लाम की सच्चाई का ज्ञान नहीं था, पहली बार सच की रोशनी से रूबरू हो रहे हैं और उनका अंतस आंदोलित हो उठा है।

मैं इंटरनेट पर एक स्त्री से मिला जिसने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था तथा इस्लामी हिजाब पहनना शुरू कर दिया था। उसकी अपनी वेबसाईट थी जिसमें उसकी फोटो पूरी तरह से काले हिजाब में ढँकी हुई थी। साथी ही उसकी मुसलमान बनने की कहानी लिखी हुई थी। वह बहुत अधिक सक्रिय थी तथा अन्य लोगों से आग्रह करती थी कि वे मेरे लेख न पढ़ें। **परंतु जब उसने सफ़िया की कहानी पढ़ी जिसका मुहम्मद ने (खैबर के युद्ध के बाद उसके घर से पकड़ लिया था, वह युद्ध नहीं कर रही थी), उसके पिता, पति तथा अन्य अनेक सम्बन्धियों का कत्ल करने के बाद, निर्ममता से बलात्कार किया था तो वह भौंचक्की रह गयी।** उसने अन्य मुसलमानों से इस विषय पर प्रश्न पूछे परंतु उसका यह प्रयास व्यर्थ रहा। फिर द्वारा खुल गया तथा उसकी अतरात्मा ने उसे अज्ञानता के स्वर्ग से बाहर निकाल फेंका। वह मुझे लिखती रही तथा एक के बाद एक प्रश्न पूछती रही। अंततः, विभिन्न चरणों से होते हुए, अंध आस्था से प्रबुद्धता की ओर तेजी से बढ़ने लगी तथा उसने इस दुष्कर मार्ग पर चलकर प्रबोधन तक पहुँचने में मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए मेरा धन्यवाद ज्ञापन किया। वह याहू इस्लामी क्लब से पूरी तरह से पृथक हो गयी।

जब लोगों को मुहम्मद के अपवित्र जीवन तथा कुरान की मूर्खताओं के विषय में ज्ञात होता है तो वे भौंचक्के रह जाते हैं। मैं इस्लाम की पोल खोलना चाहता हूँ, मुहम्मद के अपवित्र जीवन की सच्चाई लोगों के सामने लाना चाहता हूँ, उसके घृणा से भरे हुए शब्द, उसके दावों की निरर्थकता को मुसलमानों के सामने खोल-खोल कर रखना चाहता हूँ। वे क्रुद्ध होंगे। वे मुझे कोसेंगे, अपमानित करेंगे तथा मुझसे कहेंगे कि मेरे स्तंभों को पढ़ने के बाद इस्लाम में उनकी आस्था और भी "सुदृढ़" हो गयी। परंतु यह वह स्थान है जहाँ पर मैं समझ सकता हूँ कि मैंने उनके मन-मस्तिष्क में संदेह के बीज डाल दिए हैं। वे यह सब कहेंगे क्योंकि वे भौंचक्के हो गए हैं तथा किसी तरह से इन सब से इनकार करना चाहते हैं। संदेह का बीज एक बार बो दिया गया तो अंकुरित होकर रहता है। कुछ लोगों में अंकुरण वर्षों में होता है, परंतु अवसर पाने पर यह अवश्य ही अंकुरित होगा।

संदेह सबसे बड़ा उपहार है जो हम एक दूसरे को दे सकते हैं। यह प्रबुद्धता का उपहार है। संदेह हमें स्वतंत्र कर देता

है, हमारे ज्ञान में वृद्धि करता है तथा ब्रह्मांड के रहस्यों की व्याख्या करता है। आस्था हमें अज्ञानता में डुबो कर रखती है।

एक बाधा जिससे हमें पार पाना है वह परम्परा तथा मिथ्या नैतिकता की बाधा है जो हमारे ऊपर हजार वर्षों की धार्मिक परवरिश ने थोप दी है। विश्व में आज भी आस्था की महिमा है तथा संदेह को दुर्बलता की निशानी माना जाता है। जनता अभी भी आस्थावान पुरुषों का नाम सम्मान से लेती है तथा आस्थाहीन लोगों से घृणा करती है। हम अपने आस्थागत मूल्यों में कस कर बंद हैं। आस्था का अभिप्राय बिना साक्ष्य के किसी विषयवस्तु पर विश्वास करना है। मूर्खता की भी यह परिभाषा है: बिना साक्ष्य के विश्वास कर लेना। इस प्रकार आस्थावान होने में कोई यश नहीं है। आस्थावान होने का अर्थ मूर्खता, सरलता से विश्वास कर लेना, भावुकता तथा सरलता से ठगा जाना। कोई इन गुणों पर कैसे गर्व कर सकता है?

संदेह का अभिप्राय इसका ठीक विपरीत होता है। इसका तात्पर्य है कि हम स्वतंत्र रूप से सोच सकें, प्रश्न पूछ सकें

तथा आलोचनात्मक दृष्टि रखें। हम विज्ञान तथा आधुनिक सभ्यता के उन स्त्री-पुरुषों को श्रेय देते हैं जिन्होंने संदेह किया, उन्हें नहीं जिन्होंने विश्वास किया। जिन्होंने संदेह किया वे अग्रणी थे; वे वैचारिक क्रांति के नेता थे। वे दार्शनिक, अन्वेषक तथा आविष्कारक थे। जिन्होंने विश्वास किया वे एक अनुचर के मानिंद जिए और मर गए तथा मानव की समझ में तथा विज्ञान की प्रगति में उनका नगण्य अथवा शून्य योगदान रहा।

2. **इनकार:** सदमे के बाद अथवा संभवतः साथ-साथ इनकार कि प्रवृत्ति जागृत होती है। अधिकांश मुसलमान इनकार में फंसे रहते हैं। वे यह स्वीकार करने में अनिच्छुक तथा असमर्थ होते हैं कि कुरान एक छलावा है। वे बदहवास होकर उस विषयवस्तु को समझने की चेष्टा करते हैं जिसे समझाया नहीं जा सकता, वे कुरान में चमत्कार ढूँढने की कोशिश करते हैं तथा तर्क तथा औचित्य के प्रत्येक नियम को ताक पर रखते हुए कुरान को सही ठहराने का प्रयत्न करते हैं तथा मुहम्मद के निंदनीय कृत्यों पर पीछे हट जाते हैं। मैंने भी यह सब कुछ अपनी यात्रा के प्रथम

चरण में किया था। इनकार करना एक सुरक्षित स्थिति है। यह अज्ञानता के स्वर्ग से निष्कासित किए जाने की सच्चाई को स्वीकार करने की अनिच्छा है। फिर आप वापस लौटने का प्रयास करते हैं, अगले चरण में प्रवेश करने का मन नहीं होता। इनकार में आपको एक सुविधाजनक क्षेत्र मिल जाता है। इनकार करने से आप आहत नहीं होंगे, सब कुछ ठीक होगा; सब कुछ अच्छा होगा।

सत्य अत्यंत पीड़ादायक होता है, विशेषकर उस स्थिति में जब आपका सम्पूर्ण जीवन झूठ का अभ्यस्त रहा हो। **एक मुसलमान के लिए मुहम्मद को उसके वास्तविक रूप में स्वीकार करना सरल नहीं है। यह कुछ उस तरह है जैसे एक बच्चे से कहना कि उसका पिता एक हत्यारा, बलात्कारी तथा चोर है।** बच्चा, जो अपने पिता का परम प्रशंसक है, यह स्वीकार नहीं करेगा चाहे उसे दुनियाँ भर के साक्ष्य दिखा दिए जाएं। यह सदमा इतना गहरा है कि वह केवल इससे इनकार कर सकता है। वह आपको झूठा कहेगा, आहत करने के लिए आपसे घृणा करेगा, आपको कोसेगा, आपको अपना शत्रु समझेगा तथा संभवतः क्रोध में उन्मत्त होकर आपको शारीरिक क्षति भी पहुँचा सकता है।

यह इनकार का चरण है। यह आत्मरक्षा की तरकीब है। यदि पीड़ा अत्यंत गहरी है, तो इनकार उस पीड़ा को हर लेता है। यदि माँ को यह बताया जाए कि उसका बच्चा दुर्घटना में काल-कवलित हो गया है, तो वह प्रथमतः इनकार करेगी। महान विपदाओं के समय, हमें प्रायः यह अनोखा खयाल आता है कि हो न हो यह दुःस्वप्न है तथा जागृत होने पर सब कुछ ठीक होगा। परंतु यथार्थ अत्यंत निष्ठुर होता है तथा यह यों ही हवा में नहीं उड़ जाता। हम इनकार में कुछ समय तक ही रह सकते हैं, परंतु देर-सबेर सच को स्वीकार करना ही पड़ता है।

मुसलमान मिथ्या में लिपटे हुए हैं। क्योंकि इस्लाम के विरुद्ध बोलना मृत्युदण्ड को न्योता देना है, इस कारण कोई भी सच बोलने की हिम्मत नहीं करता। जो ऐसा करते हैं उनका जीवन लंबा नहीं होता। उनके जल्द की खामोश कर दिया जाता है। तो फिर आप सच कैसे जानोगे जब हमेशा झूठ सुनते आए हो?

एक ओर कुरान यह दावा करता है कि यह एक चमत्कार है तथा किसी को भी चुनौती देता है की वह इस जैसी कोई सूरह बनाकर ले आए।

यदि तुम्हें उस पर संशय है जो हमने अपने सेवक पर अवतरित किया है तो इस जैसी कोई सूरह बनाकर ले आओ तथा अल्लाह के अतिरिक्त औरों की मदद भी ले लो, यदि तुम सच्चे हो। (क़ुरान: 2/23)

फिर यह अपने अनुचरों से यह भी कहता है कि हर उस व्यक्ति का कत्ल कर दो जो इसकी (कुरान की) आलोचना करने की अथवा चुनौती देने की हिम्मत करता है। यदि आप हिम्मत करके चुनौती स्वीकार करते हो तथा कुरान जैसी घटिया सूरह बनाकर ले आते हो तो आपके ऊपर इस्लाम का उपहास उड़ाने का अभियोग लगेगा जिसकी सज़ा मृत्युदण्ड है। इस धूर्तता तथा विश्वासघात के वातावरण में, सच्चाई ही शिकार बनती है।

सच का सामना करने की पीड़ा तथा यह अनुभव अत्यंत दुखद है कि जिस पर अभी तक विश्वास किया था वह सब

कुछ झूठ था। इससे उबरने का एकमात्र नैसर्गिक उपाय इनकार है। इनकार दर्द निवारक है। यह राहत पहुँचाता है, यद्यपि यह अपना सर रेत में छुपाने जैसा है।

कोई व्यक्ति इनकार में सदैव नहीं रह सकता। शीघ्र ही रात्रि आएगी तथा यथार्थ की ठिठुराने वाली ठंडक हड्डियों को जमा देगी तथा आप अनुभव करोगे कि आप अज्ञानता के स्वर्ग से बाहर हो। वह द्वार आपके पीछे बंद हो चुका है तथा उसकी चाबी फेंक दी गयी है। आपको बहुत ज्ञान है। आप एक जातिबहिष्कृत व्यक्ति हो। आप भय के साथ अंधेरे की ओर देख रहे हैं तथा घुमावदार मार्ग अनिश्चितता की गोधूलि में अस्पष्ट सा है तथा आप सावधानी से एक अज्ञात गंतव्य की ओर सावधानी से अपना पहला कदम रखते हो। आप झुँझलाते हो, लड़खड़ाते हो, अनिच्छा से अपने विचारों को केंद्रित करने की चेष्टा करते हो। परंतु भय आपके ऊपर हावी हो जाता है, हर बार जब आप स्वर्ग के उद्यान की ओर वापस जाने के लिए दौड़ते हैं तो आपको द्वार बंद मिलता है।

अधिकांश मुसलमान इनकार में जीवन जीते हैं। वे बंद द्वार से चिपक कर खड़े रहते हैं। वे न तो पीछे जाते हैं और न ही हिम्मत करके इससे दूर हट पाते हैं। जो लोग स्वर्ग के उद्यान के भीतर हैं, वे वह लोग हैं जिन्होंने उसे कभी नहीं छोड़ा था। इस द्वार से ही आप बाहर ही निकल सकते हैं। आप इस द्वार से भीतर नहीं जा सकते। (लेखक यह कहना चाहता है कि यह द्वार अज्ञानता से ज्ञान की ओर ले जाता है तथा जिसे ज्ञान प्राप्त हो गया फिर वह इसके भीतर क्यों जाना चाहेगा; जिसे मुहम्मद की हकीकत का पता लग गया वह चाहे ऊपर से मुसलमान हो तथापि उसकी निष्ठा समाप्त हो जाती है, वह उन लोगों की भांति है जो द्वार से निकलने के बाद भी उससे चिपके रहते हैं, जिसका ऊपर जिक्र किया गया) यह आनंदमय उद्यान निश्चितता का उद्यान है। यह आस्थावान अथवा मोमिनों के लिए आरक्षित है; उन लोगों के लिए जिनके मन में कोई संदेह नहीं है, जो विचार नहीं करते (केवल अनुसरण करते हैं)। वह किसी भी विषयवस्तु पर विश्वास कर लेते हैं। वह यह भी विश्वास कर लेंगे कि दिन, रात है और रात, दिन है। वे यह भी विश्वास कर लेंगे कि मुहम्मद सातवें आकाश अथवा स्वर्ग में गया

था, वहाँ अल्लाह से मिला तथा चंद्रमा के दो टुकड़े किए तथा जिन्नों से बात की।

वॉल्टेयर ने कहा था, "जो लोग मूर्खता में विश्वास करते हैं, वे उत्पीड़न कर सकते हैं।" वे यह भी विश्वास करते हैं कि काफ़िरों की हत्या करना अच्छी बात है, बम मारना पवित्र है, पत्थर मारना दिव्य है, पत्नियों को पीटने का अल्लाह ने आदेश दिया है, काफ़िरों से घृणा करना चाहिए क्योंकि अल्लाह की यही अभिलाषा है। स्वर्ग के इन अज्ञानी निवासियों की बहुतायत है। जो संदेह करते हैं, वे अभी भी अल्पसंख्यक हैं।

ये विश्वासी अथवा मोमिन कभी भी सच नहीं देखेंगे यदि वे स्थायी रूप से झूठ की चाशनी में लिपटे रहेंगे। जो कुछ भी उन्होंने अब तक सुना वह झूठ था कि इस्लाम अच्छा है तथा यदि मुसलमान सच्चे इस्लाम का अनुपालन करते हैं तो विश्व एक जन्नत बन जाएगा। इस्लाम में जो कुछ भी समस्या है वह मुसलमानों की त्रुटियों के कारण है; यह एक झूठ है। अधिकांश मुसलमान अच्छे लोग हैं। वे अन्य लोगों से न तो बहुत अच्छे हैं और न ही बहुत बुरे हैं। **यह इस्लाम**

है जो उनसे अत्याचार करवाता है। जो मुसलमान बुरे कार्य करते हैं, वे वह लोग हैं जो इस्लाम की शिक्षाओं का अनुसरण करते हैं। इस्लाम, मनुष्य में आपराधिक प्रवृत्ति को पोषण देता है। जितना अधिक व्यक्ति इस्लामी होगा, उतना ही वह खून का प्यासा, घृणा फैलाने वाला तथा उतना ही अधिक वह ज़ोंबी (a person who seems only partly alive, without any feeling or interest in what is happening) **बनता जाएगा।**

मैं उस सबसे इनकार करना चाहता था जो मैं पढ़ रहा था। मैं यह विश्वास करना चाहता था कि कुरान का वास्तविक अर्थ कुछ और हो, परंतु मैं ऐसा कर न सका। मैं स्वयं को यह कहकर और अधिक मूर्ख नहीं बना सकता था कि अमानवीय आयतें वास्तव में सदर्भ से बाहर रख कर देखी जा रही हैं। कुरान में कोई संदर्भ नहीं है। आयतें आपस में बेतरतीब तरीके से एक साथ रख दी गयी हैं जिनमें कोई सुसंगतता नहीं है।

3. **भ्रम:** वे लोग, जो मेरे स्तंभों को पढ़ते हैं तथा कुरान व इस्लाम के विषय में व्यक्त किए गए मेरे विचारों से आहत

होते हैं, भाग्यशाली हैं। उन्हें मुझे दोष देना चाहिए। वे मुझसे घृणा कर सकते हैं, कोस सकते हैं तथा हर प्रकार के क्रोध का मुझे लक्ष्य बना सकते हैं। परंतु जब मैंने कुरान पढ़ा तथा इसकी विषयवस्तु के विषय में जाना, तो मैं किसी को दोष नहीं दे सका। सदमे तथा इनकार के चरणों से गुजरने के बाद, मैं भ्रमित था तथा स्वयं को दोष देने लगा। मैं अपने आप से घृणा करने लगा कि मैंने क्यों मंथन किया, क्यों संदेह किया तथा उस वस्तु में क्यों दोष देखे जिन्हें मैं अल्लाह के शब्द मानता आया था।

अन्य मुसलमानों की भांति मैंने सभी झूठ, मूर्खताओं तथा अमानवीयताओं को देखा तथा स्वीकार किया। मेरा पालनपोषण एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति के रूप में हुआ था। मैं उन सब तथ्यों पर विश्वास कर लिया जिस पर विश्वास करने के लिए मुझसे कहा जाता था। बचपन से ही धीरे-धीरे, ये झूठ मुझे छोटे-छोटे टुकड़ों में परोसे जाते थे। मुझे कोई विकल्प नहीं दिया जाता था कि मैं तुलना कर सकूँ। यह एक प्रकार का टीकाकरण था। मैं सत्य के प्रति प्रतिरक्षित हो गया। परंतु जब मैंने गंभीरता से कुरान के एक-एक पृष्ठ को पढ़ना शुरू किया तो फिर समझ में आया कि यह

पुस्तक वास्तव में कहना क्या चाह रही है। मुझे मिचली आने लगी। मेरे सामने वह सारे झूठ अब उजागर होने लगे थे।

मैंने इन समस्त झूठों के विषय में सुना था तथा उन्हें स्वीकार किया था। मेरी तर्क बुद्धि कुंठित हो चुकी थी। मैं कुरान की निरर्थकता के विषय में असंवेदनशील हो चुका था। जब मुझे कोई ऐसी जानकारी मिलती जो मूर्खतापूर्ण लगती तो मैं इसे परे झटक देता था तथा स्वयं से कहता था कि हर किसी को एक व्यापक दृष्टि रखनी चाहिए, एक "बड़ी तस्वीर" पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। वह रमणीय बड़ी तस्वीर कहीं नहीं मिली सिवाय मेरे अपने मन की कल्पना में। मैं एक निष्कलंक इस्लाम का चित्र बनाया था। इस कारण इसमें निहित मूर्खताओं का मुझ पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था, क्योंकि मैं उस पर कोई ध्यान नहीं देता था। जब मैंने कुरान को पुरा पढ़ लिया तो मैंने पाया कि वहाँ कुछ और ही तस्वीर है जो मेरे मन में बसी तस्वीर से बिल्कुल भिन्न है। कुरान के पन्नों से उभरती यह नई तस्वीर हिंसक, असहिष्णु, अतार्किक तथा अहंकारी है जो इस्लाम

को एक ऐसे धर्म के रूप में चित्रित करती है जो शांति, समानता तथा सहिष्णुता से कोसों दूर है।

इतनी सारी मूर्खताओं के सम्मुख, मुझे इनकार की मुद्रा के साथ अपनी बुद्धि को स्थिर रखना था। परंतु मैं कितने समय तक सत्य से इनकार कर सकता था जब यह सूरज के प्रकाश की भांति मेरे सम्मुख दैदीप्यमान था? मैं कुरान को अरबी भाषा में पढ़ रहा था ताकि मैं त्रुटिपूर्ण अनुवाद को दोषी न ठहरा सकूँ। बाद में मैंने अन्य अनुवाद पढ़े। मैं यह अनुभव किया कि अधिकांश अंग्रेजी अनुवाद पूर्णरूपेण विश्वसनीय नहीं हैं। अनुवादकों ने पूरी चेष्टा की है कि शब्दों में तोड़मरोड़ करके तथा कोष्ठकों में कुछ अपने शब्द डाल कर कुरान की हिंसा तथा अमानवीयता को छुपा लें अथवा उसकी कटुता को कम कर दें। अरबी भाषा में कुरान अधिक दिल दहला देने वाली है बजाय कि अंग्रेजी अनुवाद के।

मैं भ्रमित था तथा मुझे यह ज्ञात नहीं था कि मुझे किधर मुड़ना है। मेरी आस्था हिल गयी थी तथा मेरा विश्व धराशायी हो रहा था। मैं उससे इनकार नहीं कर सकता था

जो मैं पढ़ रहा था। परंतु मैं इस सम्भावना को स्वीकार नहीं कर पा रहा था कि यह सब एक बहुत बड़ा झूठ है। ऐसा कैसे हो सकता है, मैं अपने आप से पूछता था कि इतने सारे लोगों ने सच को नहीं देखा तथा मैं देख सका? जलालुद्दीन रूमी जैसे महान दार्शनिक यह क्यों नहीं देख सके कि मुहम्मद एक ढोंगी था तथा कुरान एक छलावा है, और मैंने देख लिया? यह वह मनःस्थिति थी जब मैं "अपराध-बोध" वाले चरण में प्रवेश किया।

4. **अपराध-बोध:** यह अपराध-बोध मेरे मन में कई महीनों तक रहा। मैं अपने विचारों के लिए खुद से घृणा कर रहा था। मुझे ऐसा लगा कि अल्लाह मेरी आस्था की परीक्षा ले रहा था। मैं शर्मिंदा हो गया। मैंने उन विद्वान लोगों से बात की जिन पर मैं विश्वास करता था, जो न केवल ज्ञानी थे अपितु जिनके चिंतन में बुद्धि की झलक थी। इन लोगों से मुझे बहुत कम सुनने को मिला जो मेरे अंतस की अग्नि को शांत कर सके। इनमें से एक विद्वान ने कहा कि मुझे कुछ समय के लिए क़ुरान नहीं पढ़नी चाहिए। उसने कहा कि मुझे प्रार्थना करनी चाहिए तथा केवल वही पुस्तकें पढ़नी चाहिए जो मेरी आस्था को दृढ़

कर सकें। मैंने वही किया, परंतु मुझे कोई लाभ नहीं हुआ। कुरान की मूर्खतापूर्ण तथा कभी-कभार निर्दयी व हास्यास्पद आयतें मुझे निरंतर बेचैन कर रही थीं। हर बार जब मैं पुस्तकों वाली अलमारी की ओर देखता और वहाँ वह पुस्तक रखी हुई देखता तो मुझे पीड़ा होती। मैंने उसे लिया तथा अन्य पुस्तकों के पीछे रख दिया। मुझे लगा कि यदि मैं कुछ समय के लिए इस पुस्तक के विषय में नहीं सोचता हूँ तो मेरे नकारात्मक विचार स्वयमेव विलुप्त हो जाएंगे तथा मैं अपनी खोई हुई आस्था को पुनः प्राप्त कर सकूँगा। परंतु वे विचार मेरे मन से नहीं निकले। मैंने यथासंभव इनकार किया फिर यह अशक्य हो गया। मैं सदमे में था, भ्रमित था, मैं अपराध-बोध से ग्रस्त था तथा यह सब अत्यंत दर्दनाक था।

अपराध-बोध का यह भाव लंबे समय तक कायम रहा। एक दिन मैंने यह निर्णय लिया कि अब बहुत हो गया। मैंने स्वयं से कहा कि यह मेरी त्रुटि नहीं है। मैं इस अपराध-बोध को सदा के लिए अपने साथ नहीं ले जा सकता; मैं ऐसे निरर्थक वस्तुओं के विषय में और अधिक नहीं सोचना चाहता। यदि अल्लाह ने मुझे मस्तिष्क दिया है, तो वह यह

चाहता है कि मैं इसका उपयोग करूँ। यदि सही-गलत के विषय में मेरे विचार अलग है तो यह मेरी गलती नहीं है। मेरा विचार कहता है कि हत्या करना बुरा है तथा मुझे ज्ञात है कि यह बुरा है, क्योंकि मैं खुद कत्ल नहीं होना चाहता। फिर क्यों अल्लाह के रसूल ने इतने सारे निर्दोष लोगों की हत्या की तथा अपने अनुचरों को आदेश दिया कि उन सभी की हत्या करो जो विश्वास नहीं करते? यदि बलात्कार बुरा है तथा मुझे ज्ञात है कि यह बुरा है क्योंकि यह मैं चाहता हूँ कि यह कृत्य उन लोगों के साथ न हो जिनके प्रति मेरे हृदय में स्नेह है तो फिर क्यों अल्लाह के रसूल ने युद्ध में पकड़ी गयी स्त्रियों के साथ बलात्कार किया? यदि गुलामी बुरी है तथा मुझे ज्ञात है कि यह इस कारण बुरी है कि मैं अपनी स्वतंत्रता खोकर गुलाम नहीं बनना चाहता, फिर क्यों रसूल अल्लाह ने इतने सारे लोगों को गुलाम बनाया तथा उन्हें बेचकर स्वयं को समृद्ध किया? यदि धर्म थोपना बुरा है तथा मुझे ज्ञात है कि यह बुरा है क्योंकि मैं यह नहीं चाहता कि कोई अन्य व्यक्ति मेरे ऊपर ऐसा धर्म थोपे जिसे मैं पसंद नहीं करता तब फिर क्यों रसूल अल्लाह ने जिहाद की प्रशंसा की तथा अपने अनुचरों का आह्वान किया कि वे अविश्वासी गैर-मोमिनों की हत्या करें, उनकी सम्पत्ति लूटें

तथा उनकी स्त्रियों तथा बच्चों को युद्ध में प्राप्त लूट के माल की भांति वितरित करें? यदि अल्लाह मुझसे कहता है कि अमुक वस्तु अच्छी है तथा मुझे ज्ञात है कि यह इसलिए अच्छी है, क्योंकि मुझे यह अच्छी लगती है तो फिर अल्लाह के रसूल ने ठीक इसके उलट कार्य क्यों किया?

5. **मोहभंग:** जब मैं इस अपराध-बोध से मुक्त हो गया तो निराशा, मोहभंग तथा खीझ ने उसका स्थान ले लिया। मुझे खेद का अनुभव हुआ कि मैंने अपने जीवन के इतने वर्ष नष्ट किए तथा मुझे उन मुस्लिमों के लिए भी खेद हुआ जो अभी तक इन मूर्खतापूर्ण विचारों में फंसे हुए हैं; मुझे उन सभी लोगों के लिए खेद हुआ जो इन झूठी विचारधाराओं के नाम पर अपना जीवन गँवा चुके हैं; मुझे उन स्त्रियों के लिए दुख था जो लगभग सभी इस्लामी देशों में, हर प्रकार के उत्पीड़न तथा अपमान का शिकार हो रही हैं तथा उन्हें इस बात का संज्ञान ही नहीं है कि उनका उत्पीड़न हो रहा है।

मैंने उन सभी युद्धों के विषय में विचार किया जो धर्म के नाम पर लड़े गया, इतने सारे लोग अकारण मृत्यु को प्राप्त

हुए। लाखों मोमिन अपना घरबार छोड़कर अल्लाह के नाम पर युद्ध के लिए निकल पड़े, उन्हें कभी वापस नहीं आना था, उन्हें यह विश्वास था कि वे अल्लाह की आस्था को प्रसारित कर रहे हैं। इन लोगों ने लाखों निर्दोष लोगों की हत्या की। सभ्यताएं नष्ट कीं, पुस्तकालय जला दिए तथा अकारण इतना सारा ज्ञान नष्ट हो गया। मुझे स्मरण है कि मेरे पिता हर दिन सुबह जल्दी उठते थे तथा सर्दियों के बर्फ़ जैसे ठंडे पानी से वज़ू करते थे। मुझे स्मरण है कि रमजान के महीने में वह घर आते समय भूखे व प्यासे होते थे तथा मेरे मन-मस्तिष्क में उन करोड़ों लोगों का खयाल है जो इसी प्रकार अकारण स्वयं को यंत्रणा दे रहे हैं। यह अनुभव होना कि मेरे विश्वास का हर पहलू मिथ्या था तथा जो कुछ भी मैंने इस विश्वास के चलते किया उसमें मेरा जीवन व्यर्थ हुआ तथा इस तथ्य का संज्ञान लेना कि करोड़ों अन्य लोग अभी तक अज्ञान के इस शुष्क मरुस्थल में एक मृगमरीचिका की खोज में भटक रहे हैं,अत्यंत निराशाजनक था।

इससे पूर्व अल्लाह मेरे मन के किसी कोने में अवश्य रहता था। मैं अपनी कल्पनाओं में उससे बात करता था। मुझे

लगता था कि अल्लाह देख रहा है तथा मेरे प्रत्येक अच्छे कृत्य का संज्ञान ले रहा है। यह सोच कि कोई मुझे देख रहा है, मेरा पथप्रदर्शन कर रहा है तथा मुझे संरक्षित कर रहा है, बहुत सुकून देने वाली थी। यह स्वीकार करना कठिन था कि अल्लाह जैसी कोई वस्तु नहीं है तथा यदि अल्लाह वास्तव में है तो वह यह अल्लाह नहीं है (जो कुरान में वर्णित है)। मैंने अल्लाह में विश्वास नहीं छोड़ा, परंतु इस समय तक मैं यह निश्चित रूप से जान गया था कि यदि ब्रह्मांड का रचयिता कोई है तो वह मुहम्मद की कल्पना वाला अल्लाह नहीं हो सकता। अल्लाह सिरे से अज्ञानी था। कुरान त्रुटियों से भरी हुई पुस्तक है। ब्रह्मांड का कोई भी रचयिता इतना मूर्ख नहीं हो सकता जितना कुरान का अल्लाह प्रतीत होता है। एक बीमार व्यक्ति (मानसिक रूप से) के मन के अतिरिक्त अल्लाह का अस्तित्व और कहीं नहीं हो सकता। मुझे यह समझ में आ गया था कि अल्लाह और कुछ नहीं बस मुहम्मद की कल्पना की उड़ान थी। मैं कितना हताश हो गया जब मुझे यह अनुभव हुआ कि इतने वर्षों तक मैं एक मिथ्या कल्पना की पूजा कर रहा था।

6. **हताशा:** खोने के दुख तथा निराशा की भावना के साथ एक प्रकार की हताशा घर कर लेती है। ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा पूरा विश्व मेरे सामने धराशायी हो गया। मैंने अनुभव किया कि जिस धरती पर मैं खड़ा था वह वहाँ नहीं थी तथा मैं एक गर्त में गिर रहा था जिसकी कोई थाह नहीं थी। बिना अतिशयोक्ति के मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझे ऐसा लगा कि मैं जहन्नुम में हूँ। मैं व्यग्र था, मदद की गुहार लगा रहा था, परंतु कोई मदद नहीं कर सकता था। मैं अपने विचारों पर शर्मिंदा था तथा ऐसे विचारों के लिए स्वयं से घृणा कर रहा था। अपराध-बोध के साथ कुछ बहुत बड़ी वस्तु खोने का ग़म तथा अतीव हताशा थी। मैं सामान्यतः एक सकारात्मक सोच रखने वाला व्यक्ति हूँ। मैं सदैव प्रत्येक विषयवस्तु का सकारात्मक पक्ष देखता हूँ। मैं सदैव यह सोचता हूँ कि कल, आज से बेहतर होगा। मैं उन लोगों में नहीं हूँ जो सरलता से हताश हो जाते हैं। परंतु आस्था खोने का यह ग़म मुझे खाए जा रहा था। मैं हृदय के उस बोझ का आज भी स्मरण करता हूँ। मुझे लगता कि अल्लाह ने मुझे अकारण ही छोड़ दिया है। मैं स्वयं से प्रश्न करता:"क्या यह अल्लाह का दण्ड है?" मुझे याद नहीं पड़ता कि मैंने कभी किसी को दुख पहुँचाया होगा? मैंने

शक्ति से बाहर जाकर ऐसे लोगों की मदद की है जिनसे मेरा परिचय था तथा जिन्होंने मुझसे मदद मांगी थी। तो फिर अल्लाह मुझे इस प्रकार दंडित क्यों करेगा? वह मेरी प्रार्थनाओं का उत्तर क्यों नहीं दे रहा था? उसने क्यों मुझे मेरे इन अनुत्तरित प्रश्नों के साथ मेरे हाल पर छोड़ दिया है? क्या वह मेरी परीक्षा लेना चाह रहा है? मेरी प्रार्थनाओं के उत्तर कहाँ हैं? क्या मैं यह परीक्षा उत्तीर्ण कर सकता हूँ यदि मैं मूर्ख बन जाऊँ तथा अपने मन-मस्तिष्क का उपयोग करना बंद कर दूँ? यदि ऐसा है तो फिर उसने मुझे मस्तिष्क दिया ही क्यों है? क्या आस्था की परीक्षा में केवल मंदबुद्धि लोग ही उत्तीर्ण हो सकते हैं?

मैं ठगा सा अनुभव कर रहा था; ऐसा लग रहा था जैसे किसी ने मेरा बलात्कार कर दिया है। मैं कह नहीं सकता कि कौन सी भावना अधिक प्रभावी है। कभी-कभी मैं निराश, दुखी तथा हताश हो जाता था। यदि आस्था मिथ्या है तो भी यह मीठी है। आस्था में विश्वास रखना बहुत सुकून देता है।

यदि मैं अपनी दुख तथा क्षति की भावना के साथ-साथ मुझे स्वतंत्रता का भी अनुभव हुआ। यह विचित्र है कि मैं अब भ्रमित अथवा अपराध-बोध से ग्रस्त नहीं था। **मुझे यह पक्का विश्वास हो चुका था कि कुरान एक छलावा है तथा मुहम्मद एक ढोंगी व्यक्ति था।**

इस दुख से निजात पाने के लिए, मैंने स्वयं को अन्य गतिविधियों में व्यस्त रखने की चेष्टा की। यहाँ तक कि मैंने नृत्य की कक्षा में दाखिला लिया तथा यह अनुभव किया कि जीवित रहना किसे कहते हैं; मैं अपराध-बोध के भाव से मुक्त होना चाह रहा था, मैं जीवन का आनंद लेना चाह रहा था तथा सामान्य रहना चाहता था। मैंने यह अनुभव किया कि मैंने अब तक क्या कुछ खोया तथा कितनी मूर्खता के साथ मैंने स्वयं को जीवन की सामान्य खुशियों से वंचित रखा था। निश्चय ही अस्वीकृति ही वह साधन होता है जिसके बल पर पंथिक संप्रदाय अपने विश्वासी अनुचरों पर नियंत्रण करते हैं। मैंने जीवन की साधारण खुशियों से स्वयं को वंचित कर रखा था तथा मैं सदैव अल्लाह के डर में जी रहा था तथा मुझे यह लग रहा था कि यह सब सामान्य है। उन सामान्य आनंद की बात कर रहा हूँ जिसमें सुबह सोना,

नृत्य करना, महिला मित्र बनाना, अंगूर की शराब का आनंद लेना शामिल है।

7. **क्रोध:** इस अवसर पर मैं प्रबुद्धता की आध्यात्मिक यात्रा के अंतिम चरण में था। मैं रोष में था। मैं इस बात पर क्रुद्ध था कि मैंने इतने वर्षों तक इन मिथ्या बातों पर विश्वास किया, एक निरर्थक वस्तु के पीछे जीवन के इतने वर्ष बर्बाद किये। मैं अपनी संस्कृति (इस्लामी) पर क्रुद्ध था जिसने मेरे साथ विश्वासघात किया क्योंकि इसमें मुझे त्रुटिपूर्ण नैतिक मूल्य दिए। मैं अपने मातापिता से क्रुद्ध था, जिन्होंने मुझे झूठ का पाठ पढ़ाया। मैं अपने आप पर क्रुद्ध था कि मैंने यह मंथन पहले क्यों नहीं किया तथा झूठ पर विश्वास करता रहा। मैं स्वयं पर क्रुद्ध था कि मैंने एक ढोंगी पर क्यों विश्वास किया। मैं अल्लाह पर रुष्ट था जिसने मुझे निराश किया, क्योंकि उसने उन झूठों को नहीं रोका, न ही मिथ्याप्रचार में कोई हस्तक्षेप किया जो उसके नाम पर फैलाए जा रहे थे।

जब मैं देखता कि लाखों मुसलमान निष्ठा के साथ सऊदी अरब जा रहे हैं तथा इस उपक्रम में अधिकांश लोग हज

करने के लिए अपने जीवन भर की कमाई को नष्ट कर रहे है तो मुझे क्रोध आता था उस झूठ पर जिसमें लिपट कर उनकी परवरिश हुई थी। जब मैं यह पढ़ता कि किसी व्यक्ति ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया है, जिसे मुसलमान बड़ी खुशी से प्रचारित करते हैं, तो मैं दुख तथा अमर्ष में भर उठता था। मैं उस निर्दोष व्यक्ति के लिए दुखी होता था तथा झूठ के उपर क्रोधित होता था, जिसके बल पर उसे धर्मांतरित किया गया था।

मैं पूरे विश्व पर क्रोधित था जो इस झूठ का संरक्षण करना चाहता था तथा वह आपको अभिशप्त करना चाहता था यदि आप उच्च स्वर में उसे वह बताने की कोशिश करें जो आप जानते हैं (अर्थात, इस्लाम की सच्चाई)। ऐसा केवल मुसलमान नहीं करते थे, बल्कि पाश्चात्य विद्वान भी करते थे जो इस्लाम में विश्वास नहीं करते। इस्लाम के अतिरिक्त और किसी की भी आलोचना अनुमेय थी। इस्लाम के असत्य को उजागर करने के प्रयास में मिलने वाले प्रतिरोध से मैं चकित था तथा इसने मेरे रोष को और भी बढ़ा दिया।

सौभाग्यवश यह क्रोध बहुत लंबे समय तक नहीं चला। मैं यह जान चुका था कि मुहम्मद अल्लाह का रसूल नहीं था, बल्कि एक ठग, एक पथभ्रष्ट करने वाला शिक्षक था जिसका एकमात्र लक्ष्य जनता को सम्मोहित करके अपनी नरगिसी महत्वाकांक्षाओं को पूरा करना था। मुझे जहन्नुम की बचकानी कहानियों के विषय में जानकारी थी जिनमें धधकती ज्वाला थी तथा जन्नत जहाँ शराब, दूध तथा शहद की नदियां थीं; व्यभिचार का प्रावधान था; यह सब एक मानसिक रोगी की कल्पना थी जिसका मन असभ्यता, असुरक्षा तथा अहंकार से भरा हुआ था जो येन केन प्रकारेण अपने प्रभुत्व को मनवाना चाहता था।

मैंने यह अनुभव किया कि मैं अपने मातापिता से क्रुद्ध नहीं हो सकता; क्योंकि उन्होंने अपना भरसक प्रयास किया तथा जो उनकी निगाह में श्रेष्ठ था उसकी शिक्षा मुझे दी। मैं अपने समाज अथवा संस्कृति से भी रुष्ट नहीं हो सकता क्योंकि मेरे अपने लोग उतने ही अज्ञानी थे जितने मेरे मातापिता तथा मैं। कुछ सोचविचार के बाद, मैंने अनुभव किया प्रत्येक व्यक्ति पीड़ित है। एक अरब से अधिक पीड़ित लोग हैं। **जो लोग उत्पीड़न करते हैं वे भी इस्लाम से पीड़ित**

हैं। मैं मुसलमान को दोष कैसे दे सकता हूँ यदि उन्हें यह ज्ञात ही नहीं है कि इस्लाम का अभीष्ट क्या है तथा जो पूरी निष्ठा के साथ इस मिथ्या विश्वास के साथ जीते हैं कि इस्लाम शांति का धर्म है।

मुहम्मद, एक आत्ममुग्ध अथवा नरगिसी व्यक्तित्व

मुहम्मद के विषय में क्या कहा जाए? क्या मुझे उससे रुष्ट होना चाहिए क्योंकि वह झूठा, धोखेबाज तथा जनता को पथभ्रष्ट करने वाला व्यक्ति था? मैं एक मृत व्यक्ति से कैसे रुष्ट हो सकता हूँ? मुहम्मद भावनात्मक रूप से एक रुग्ण व्यक्ति था जिसमें आत्मनियंत्रण नहीं था। 8 वर्ष की आयु तक, उसका लालन-पालन एक अनाथ के मानिंद, पाँच भिन्न अभिवावकों की देखभाल में हुआ। जैसे ही वह किसी अभिवावक के साथ जुड़ता, वैसे ही उसे किसी और को दे दिया जाता। यह सब कुछ उसके लिए अत्यंत कठोर अनुभव था तथा उसके भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक था। शैशवकाल में, वह स्नेह से तथा किसी से जुड़ाव अनुभव करने से वंचित रहा, वह भय की आशंकाओं के साथ बड़ा

हुआ तथा उसमें आत्मविश्वास की कमी थी। वह आत्ममुग्ध हो गया। एक आत्ममुग्ध एक ऐसा व्यक्ति होता है जिसे अपने बाल्यकाल में पर्याप्त प्रेम की प्राप्ति नहीं होती, वह प्रेम करने में असमर्थ होता है तथापि, वह चाहता है कि लोग उस पर ध्यान दें, उसे सम्मान तथा पहचान दें। वह अपनी योग्यता इसमें समझता कि लोग उसके विषय में क्या विचार रखते हैं। बिना इस पहचान के वह शून्यता का अनुभव करता है। वह चालबाज़ तथा झूठ बोलने का आदी हो जाता है।

आत्ममुग्ध व्यक्ति अपनी महानता के स्वप्न देखता है। वह विश्व को जीतना चाहता है तथा हर किसी के ऊपर धौंस जमाना चाहता है। अपनी बड़ी-बड़ी कल्पनाओं में ही उनका आत्म-प्रेम संतुष्ट होता है।

कुछ प्रख्यात आत्ममुग्ध व्यक्तित्वों में, हिटलर, मुसोलिनी, स्टालिन, सद्दाम हुसैन, इदी अमीन, पोल पॉट और माओ का नाम लिया जा सकता है। आत्ममुग्ध अथवा नरगिसी व्यक्तित्व के लोग बुद्धिमान होते हैं, परंतु साथ में भावनात्मक रूप से टूटे हुए होते हैं। वे अत्यंत बेचैन से रहते हैं। वे अपने लिए बहुत ऊंचे लक्ष्य रखते हैं। उनके लक्ष्य में सदैव सदैव दूसरों पर प्रभुत्व स्थापित करना, शक्ति तथा सम्मान प्राप्त करना, अपरिहार्य रूप से होता है। यदि उनकी उपेक्षा

कर दी जाए तो वे समाप्त हो जाते हैं। आत्ममुग्ध व्यक्ति प्रायः अपने असावधान शिकार पर नियंत्रण पाने के लिए बहाने खोजता है। हिटलर के लिए यह बहाना उसका राजनैतिक दल तथा जाति थी, मुसोलिनी के लिए यह अन्य के विरोध में फासीवाद अथवा राष्ट्रीय एकता थी, मुहम्मद के लिए यह धर्म था। यह साधन उनकी शक्तिप्राप्ति के यंत्र मात्र थे। आत्ममुग्ध व्यक्ति स्वयं को आगे लाने के स्थान पर एक अभीष्ट को, एक आस्था को अथवा धर्म को बढ़ावा देते हैं तथा ऐसा करते समय, स्वयं को एकमात्र शक्ति के रूप में तथा इन अभीष्टों की प्राप्ति के निमित्त स्वघोषित प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत करते हैं। **हिटलर ने जर्मन लोगों से कभी यह नहीं कहा कि वह उससे एक व्यक्ति के रूप में प्रेम करें बल्कि उसने यह कहा कि वे उससे प्रेम व सम्मान का बर्ताव करें क्यों कि वह उनका नेता है।** मुहम्मद ने किसी से यह नहीं कहा कि वह उसकी आज्ञा का अनुपालन करे। परंतु वह अपने अनुचरों से सहज भाव से आग्रह करता था कि वे अल्लाह तथा उसके रसूल की आज्ञा का पालन करें। निश्चय ही अल्लाह, मुहम्मद के अपने व्यक्तित्व का ही दूसरा रूप था, अतएव अंततोगत्वा समस्त आज्ञाकारिता उसी के लिए थी। इस प्रकार वह प्रत्येक व्यक्ति के जीवन पर नियंत्रण कर सकता था; उसे केवल यह कहना था कि वह अल्लाह का प्रतिनिधि है तथा वह जो कुछ भी कहता है, वस्तुतः वह अल्लाह द्वारा निर्दिष्ट है।

"Malignant Self Love - Narcissism Revisited" के लेखक डॉक्टर सैम वाकनिन बताते हैं: "प्रत्येक व्यक्ति भिन्न परिमाण में आत्ममुग्ध होता है, आत्ममुग्ध होना एक स्वस्थ लक्षण हैं। यह जीवित रहने के लिए मददगार है। स्वस्थ आत्ममुग्धता तथा रुग्ण आत्ममुग्धता में बहुत अंतर है। रुग्ण आत्ममुग्धता तथा इसका अंतिम स्वरूप NPD (Narcissistic Pathological Disorder), एक ऐसी मनःस्थिति है जब मनुष्य की संवेदना समाप्त हो जाती है। आत्ममुग्धता की पराकाष्ठा पर पहुँचा व्यक्ति अन्य लोगों को एक यंत्र के रूप में अपने अभीष्ट के लिए उपयोग में लाता है। वह उनका शोषण करके अपनी आत्ममुग्धता को तुष्ट करता है। उसे विश्वास होता है कि वह विशेष रूप से व्यवहृत होने का अधिकारी है क्योंकि वह अपनी कल्पित महानता को लेकर आत्ममुग्ध रहता है। आत्ममुग्ध व्यक्ति को आत्मज्ञान नहीं होता। उसकी भावना तथा अनुभूति विकृत होती हैं।

उपरोक्त लक्षण, मुहम्मद की आत्ममुग्ध छवि में कूट-कूट कर भरे थे। मुहम्मद एक संवेदनाहीन मनुष्य था जो भावनाओं से परे था। जब वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अब यहूदी उसके किसी काम के

नहीं रहे तो उसने उनके सम्मुख विनीत रहने की शिष्टता को त्याग दिया तथा उन सबका उन्मूलन कर दिया। उसने बनू कुरैजा के सभी बालिग पुरुषों की हत्या कर दी तथा अरब देश की भूमि से अन्य यहूदियों तथा ईसाइयों की भी या तो हत्या कर दी अथवा निष्कासित कर दिया। निश्चय ही यदि अल्लाह इन लोगों को वास्तव में नष्ट करने की अभिलाषा रखता था तो उसे इस कार्य के लिए अपने रसूल की आवश्यकता नहीं थी।

अतएव मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि मुझे अकारण एक मानसिक रोगी पर रुष्ट नहीं होना चाहिए, जिसकी मृत्यु बहुत पहले हो चुकी है। मुहम्मद अपनी जनता की मूर्खतापूर्ण संस्कृति से स्वयं पीड़ित था; वह अपनी माँ की अज्ञानता से भी पीड़ित था जिसने उसके शैशवकाल के आरंभिक वर्षों में, जब उसे प्रेम की बहुत अधिक आवश्यकता थी, अपने पास रखने के स्थान पर पालन पोषण के लिए एक बद्दू स्त्री को दे दिया ताकि वह नया पति प्राप्त कर सके।

मुहम्मद एक ऐसा व्यक्ति था जिसके अंग-अंग में भावनात्मक चोटों के निशान थे। डॉक्टर वाकनिन लिखते हैं, "एक आत्ममुग्ध व्यक्ति खुद से तथा अन्य लोगों से झूठ बोलता है, अस्पृश्यता की सोच

विकसित करता है, भावनात्मक प्रतिरक्षा निर्मित करता है तथा स्वयं की अजेय छवि प्रस्तुत करता है। एक आत्ममुग्ध व्यक्ति का हितसाधन करने वाली कोई भी वस्तु जीवन से अधिक मूल्यवान होती है। ऐसा व्यक्ति अपनी विनम्रता में भी उग्र होता है। वह अनोखे वादे करता है, उसकी आलोचना हिंसक तथा धमकाने वाली होती है, उसकी विनयशीलता मूर्खतापूर्ण होती है।" क्या रसूल अपनी छवि को इसी रूप में प्रस्तुत नहीं कर रहा था?

मैं सातवीं शताब्दी के अज्ञानी अरबों की न तो आलोचना कर सकता हूँ और न ही उन्हें दोष दे सकता हूँ कि उन्होंने मुहम्मद के मनोरोग को समय रहते क्यों नहीं पहचाना अथवा वे क्यों नहीं यह समझ पाए कि मुहम्मद, अल्लाह का रसूल नहीं था; वे क्यों नहीं समझ सके कि उसके अनोखे वादे तथा साधनहीन होते हुए भी महान राष्ट्रों को विजित करने तथा कुचलने के उसके विलक्षण सपने, उसकी मानसिक व भावनात्मक विकृति की परिणति थी न कि किसी दिव्य शक्ति की प्रेरणा। मैं उन अज्ञानी अरबों को कैसे दोष दे सकता हूँ जो मुहम्मद जैसे व्यक्ति के शिकार बन गए जब कि हमारे सामने लाखों जर्मन एक अन्य आत्ममुग्ध व्यक्ति के आभामंडल पर सम्मोहित हो गए जिसने मुहम्मद की भांति बड़े-बड़े वादे किए तथा जो उतना ही निर्मम, उतना ही चालबाज़ तथा उतना ही महत्वाकांक्षी था।

एक गंभीर चिंतन के बाद, मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं है जिस पर मुझे क्रुद्ध होना चाहिए। मैंने यह समझ लिया कि एक ही समय में हम पीड़ित व उत्पीड़क दोनों ही हैं। अज्ञान ही वास्तविक अपराधी है। हम अपनी अज्ञानता के करण ही ठगों पर तथा उनके झूठों पर विश्वास करते हैं जिससे उन्हें झूठे देवताओं, आस्थाओं अथवा धर्मों के नाम पर अपनी घृणा का प्रचार करने की छूट मिल जाती है। इस घृणा के कारण हम एक दूसरे से भिन्न हो जाते हैं तथा यह नहीं देख पाते कि हम एक ही मानव जाति के अंग हैं, हम एक-दूसरे के सम्बन्धी हैं तथा अन्योन्याश्रित हैं।

इस मनःस्थिति में मेरे क्रोध का स्थान सहानुभूति, संवेदना तथा प्रेम के उदात्त भावों ने ले लिया। मैंने संकल्प लिया कि मैं इस अज्ञानता के विरुद्ध संघर्ष करूंगा जिसने मानव जाति को विभाजित कर दिया है। हमने अपनी फूट की भारी कीमत चुकायी है तथा चुका रहे हैं। इस फूट का कारण अज्ञान तथा अज्ञानता, मिथ्या विश्वासों तथा खतरनाक आस्थाओं की परिणति है जिसका तानाबाना, भावनात्मक रूप से अस्थिर व्यक्ति अपने स्वार्थसाधन के लिए, बुनते हैं।

आस्थाएं हमें पृथक करती हैं। धर्म के कारण विभेद, घृणा, विवाद, हत्या की अभिलाषा तथा शत्रुता की उत्पत्ति होती है। हम मानव जाति का अंग हैं, हमें एक होने के लिए किसी आस्था, किसी कारण अथवा किसी धर्म की आवश्यकता नहीं है।

मैंने यह अनुभव किया कि जीवन का उद्देश्य विश्वास करना नहीं वरन प्रश्न करना है। मेरा यह निष्कर्ष है कि कोई भी हमें सत्य का ज्ञान नहीं दे सकता, क्योंकि सत्य की शिक्षा नहीं दी जा सकती। सत्य का केवल अनुभव किया जा सकता है। सच तो यह है कि कोई भी धर्म, दर्शन अथवा सिद्धांत आपको सत्य की शिक्षा नहीं दे सकता। सत्य अपने सजातीय मानव से प्रेम में है, एक शिशु की मुस्कान में है, मित्रता में है, बंधुत्व में है, शिशु तथा उसके मातापिता के मध्य प्रेम में है तथा अन्य व्यक्तियों के साथ हमारे सम्बन्धों में है। सत्य आस्थाओं में नहीं है। प्रेम ही एकमात्र यथार्थ है।

सारांश

आस्था से प्रबुद्धता की ओर जाने की प्रक्रिया कठिन तथा पीड़ादायक है। हम सूफ़ी दर्शन से एक व्यंजक पर चिंतन करते हैं तथा एक बार फिर प्रबुद्धता के सात चरणों अथवा सात घाटियों का स्मरण करते हैं।

आस्था वह मनःस्थिति है जिसमें हम अपने अज्ञानता पर दृढ़ रहते हैं। आप उस सुखद अज्ञानता की स्थिति में बने रहते हैं जब तक कि आप सहसा एक सदमे का शिकार हो जाते हैं फिर आप इस स्थिति से बाहर निकाल फेंके जाते हैं। यह सदमा प्रथम घाटी है।

सदमे की प्रथम प्रतिक्रिया इनकार है। इनकार एक ढाल का कार्य करता है। यह दर्दनिवारक का कार्य करते हुए, सुविधाजनक स्थल से निष्कासित होने के दुख को कम करता है। सुविधाजनक स्थल वह स्थान है जहाँ आपको सुकून मिलता है, जहाँ सब कुछ परिचित है, जहाँ हमें नवीन चुनौतियों का अथवा अज्ञात का सामना करने की आवश्यकता नहीं होती। यह दूसरी घाटी है।

सुविधाजनक स्थल पर किसी भी प्रकार का मानसिक अथवा बौद्धिक विकास नहीं होता। आगे बढ़ने के लिए तथा संवर्धित होने के लिए हमें अपने सुविधाजनक स्थल से बाहर आना ही होगा। ऐसा तब तक नहीं हो सकता जब तक कि हमें सदमा न लगे। यह भी नैसर्गिक है कि हम इनकार से सदमे की पीड़ा को कम कर दें। इस अवसर हमें एक और सदमे की आवश्यकता होती है तथा एक बार

फिर हम स्वयं को एक अन्य इनकार से संरक्षित करने की चेष्टा करते हैं। जितना अधिक से अधिक कोई व्यक्ति सच्चाई से रूबरू होता जाएगा उतना ही अधिक उसे एक के बाद एक सदमा लगता जाएगा, फिर वह एक के बाद एक इनकार से अपने संरक्षित करने की चेष्टा करता जाएगा। परंतु इनकार से सच का उन्मूलन नहीं होता। उनसे हमें क्षण भर के लिए ही संरक्षण मिलता है। जब हमारे सामने सत्य प्रकट होता है और टलने का नाम नहीं लेता तो फिर एक समय के बाद हम इनकार करते-करते थक जाते हैं। सहसा हम अपनी इनकार रूपी सुरक्षा भित्ति को और ऊंचा करने में स्वयं को असहाय पाते हैं तथा वह भित्ति धराशायी हो जाती है। हम अपने सर को रेत में छुपाकर हमेशा के लिए नहीं रख सकते। संदेह हमारे ऊपर हावी होने लगता है तथा संदेह से भरे प्रश्नों की एक श्रृंखला खुल जाती है फिर चारों ओर से हमारे ऊपर सच्चाई की बौछार होने लगती है, जिससे हमने अब तक इनकार किया था। सहसा, वह सब मूर्खताएं जिन्हें न केवल हमने अब तक स्वीकार किया था बल्कि संरक्षण भी किया था, अब तर्कपूर्ण नहीं रहीं तथा हम उन्हें निरस्त कर देते हैं।

फिर हम भ्रम की दर्दनाक घाटी में प्रवेश करते हैं जो तीसरी घाटी है। पुरातन विश्वास अतार्किक, मूर्खतापूर्ण तथा अस्वीकार्य लगते हैं

तथापि, हमारे पास कुछ ऐसा नहीं होता जिससे हम अपना जुड़ाव महसूस कर सकें। मेरे विचार में, आस्था से प्रबुद्धता के मार्ग पर यह सबसे भयावह सोपान है। इस घाटी में हम अपनी आस्था खो देते हैं, परंतु प्रबुद्धता फिर भी दूर रहती है। वस्तुतः हम कहीं के नहीं रहते। हमें ऐसा लगता है कि हम एक अंतहीन गर्त में गिरते जा रहे हैं। हम मदद की गुहार लगते हैं, परंतु हमें कुछ पुरानी निरर्थक बातें ही सुनने को मिलती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जो हमें मदद पहुँचाना चाहते हैं वे स्वयं भटके हुए हैं तथापि, वे अत्यंत आत्मविश्वास से भरे हुए होते हैं। वे उस पर विश्वास करते हैं जिसके विषय में उन्हें कुछ भी ज्ञात नहीं होता। उनके तर्कों में कोई तुक नहीं होता। वे यह चाहते हैं कि हम बिना प्रश्न किए विश्वास कर लें। वे अन्य समुदायों की आस्था का दृष्टांत सामने रखते हैं। परंतु अन्य लोगों की आस्था में निष्ठा कितनी है इससे यह नहीं सिद्ध होता उनकी अपनी आस्था में सच्चाई है अथवा नहीं। (दूसरे शब्दों में अन्य आस्थाओं के औचित्यपूर्ण होने अथवा नहीं होने से यह सिद्ध नहीं होता कि इस्लाम औचित्यपूर्ण है)

यह भ्रम की स्थिति अंततः हमें चौथी घाटी की ओर ले जाती है: अपराध बोध। आप सोच-विचार के लिए स्वयं में अपराध-बोध का अनुभव करते हो। आप संदेह करने के लिए, प्रश्न करने के लिए तथा

प्रचलित व्याख्याओं को स्वीकार करने से इनकार करने के लिए स्वयं को अपराधी मानते हो। आपको ऐसा प्रतीत होता है कि अपने विचारों के कारण आप इतने शर्मिंदा हो जैसे किसी के सम्मुख नग्न हो गए हो। आपको ऐसा प्रतीत होता है कि यह आपका दोष है कि आपकी पवित्र पुस्तकों में दी गयी मूर्खताओं में आपको कोई तत्व नज़र नहीं आता। आपको ऐसा लगता है कि अल्लाह ने आपको त्याग दिया है अथवा वह अपनी आस्था की परीक्षा ले रहा है। इस घाटी में आप अपनी भावनाओं तथा बुद्धि से तार-तार कर दिए जाते हो। भावनाओं का आधार तार्किक नहीं होता, परंतु वे अत्यंत शक्तिशाली होती हैं। आप अज्ञानता के स्वर्ग में वापस जाना चाहते हैं; आप व्यग्र होकर विश्वास करना चाहते हैं, परंतु ऐसा हो नहीं पाता। आपने सोचने का पाप कर लिया है। आपने ज्ञान के वृक्ष से उस वर्जित फल को चख लिया है। आपने अपनी कल्पनाओं के अल्लाह को नाखुश कर दिया है।

अंततः आप यह निर्णय लेते हो कि सत्य को उसके वास्तविक रूप में समझने के लिए किसी भी प्रकार के अपराध बोध की आवश्यकता नहीं है। यह अपराध-बोध आपके लिए नहीं है। आप स्वतंत्रता का अनुभव करते हो, परंतु साथ ही आप उन मिथ्या विचारों के लिए

जिसने आपको अज्ञानता में रखा तथा व्यर्थ हुए समय के लिए निराश होते हो।

फिर आप पाँचवी घाटी में प्रवेश करते हो: मोहभंग। इस घाटी में मोहभंग होता है। साथ ही आप स्वयं को दुखों से घिरा हुआ पाते हो। आप मुक्ति का अनुभव करते हो तथापि, जैसे जेल में सारा जीवन व्यतीत करने के बाद कोई व्यक्ति बाहर आता है उसी प्रकार आप अवसाद की गहरी भावना से ओतप्रोत हो जाते हो।

आप धीरे-धीरे मोहभंग की घाटी को पार करके अवसाद की घाटी में आ चुके हैं जो छठी घाटी है। आप एकांत का अनुभव करते हो बावजूद इसके कि आप स्वतंत्र हो, आपको ऐसा लगता है कि आपने कुछ खोया है। आप निरर्थक व्यतीत हुए समय के विषय में सोचते हो। आप उन अनेक लोगों के विषय में सोचते हो जिन्होंने इन बेतुकी बातों पर विश्वास किया था तथा एक मूर्ख के मानिंद अपना सब कुछ इसके लिए होम कर दिया था, यहाँ तक कि अपना जीवन भी। **इतिहास के पृष्ठ ऐसे निर्दोष लोगों के रक्त से लिखे गए हैं जिन्हें जेहोवा, अल्लाह तथा अन्य खुदाओं के नाम पर कत्ल कर दिया गया था। यह सब कुछ शून्य के लिए! यह सब कुछ झूठ के लिए!**

इसके बाद आप सातवीं घाटी में प्रवेश करते हैं, यह क्रोध की घाटी है। आप स्वयं से क्रोधित होते हैं तथा प्रत्येक वस्तु से क्रोधित होते हैं। आपको अनुभव होता है कि आपने इतने सारे झूठ पर विश्वास करके अपना बहुमूल्य जीवन नष्ट कर दिया।

परंतु फिर आपको यह अनुभव होता है कि आप भाग्यवान हो कि आप इतनी दूर तक आ सके जब कि अरबों ऐसे मनुष्य हैं जो अभी भी इनकार की ढाल से अपनी तथा अपनी आस्था की रक्षा कर रहे हैं तथा अपने सुविधाजनक स्थल से बाहर नहीं आना चाहते। वे प्रथम घाटी के दलदल में अभी तक लोट रहे हैं।

फिर आप प्रबुद्धता के लक्ष्य पर पहुँच जाते हैं, इस स्थिति में जब आप आस्था, अपराधबोध तथा क्रोध से पूर्णरूपेण मुक्त हो चुके होते हैं फिर आप अंतिम सत्य को समझने के लिए तैयार हो जाते हैं तथा जीवन के रहस्यों से पर्दा स्वयमेव हटने लगता है। आप संवेदना तथा सहानुभूति से भर जाते हैं। अब आप प्रबुद्ध होने के लिए उद्यत हैं। प्रबुद्धता तब आती है जब आपको यह अनुभव होता है कि प्रेम में ही सत्य है तथा यह सत्य अन्य मानवों के साथ हमारे सम्बन्धों में भी है, यह किसी धर्म अथवा पंथ में नहीं है। **आपको यह अनुभव होता है**

कि सत्य एक ऐसी भूमि है जहाँ मार्ग नहीं हैं। (अर्थात, सत्य को प्राप्त करने के लिए किसी प्रकार के मार्ग अथवा मार्गदर्शक की आवश्यकता नहीं है) कोई भी गुरु अथवा रसूल आपको वहाँ नहीं ले जा सकता। आप वहाँ पहुँच चुके हो!

इस महान रंगमंच पर आप अकेले नहीं हैं। आपके साथ एक बारम्बार कुरेदने वाला "साथी" है जो आपको छोड़ेगा नहीं। वह आपकी प्रगति में बाधा बनेगा तथा आपको आगे बढ़ने से रोकेगा। यह आपका भय है: दण्ड का भय, जहन्नुम का भय, मृत्यु के बाद का भय। यह नितांत बेतुकी बातें हैं तथापि, इनका आपके ऊपर नियंत्रण रहता है तथा यह आपके अवचेतन पर कार्य करती रहती हैं तथा मार्ग के प्रत्येक चरण में आपके साथ होती हैं। "आस्था से प्रबुद्धता की ओर" एक कठिन आलेख है तथा आप पहला कदम भी नहीं उठा सकते यदि आप ने भय पर विजय प्राप्त नहीं की। आपको इससे पूर्ण मुक्ति उसी स्थिति में मिल सकती है जब आप अपने गंतव्य पर पहुँच जाएंगे तथा जब आप प्रबुद्ध हो जाएंगे। तब आप भय की श्रृंखला को तोड़ सकेंगे तथा प्रबुद्धता के पंख लगाकर स्वतंत्रता के आकाश में स्वच्छंद उड़ान भर सकेंगे। यही सच्ची मुक्ति है।

25 जून 2001

मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा? (30 अप्रैल, 2011)

मुझसे प्रायः पूछा जाता है कि मैंने इस्लाम क्यों छोड़ा? यह बेतुका सा प्रश्न है, कुछ मुसलमान यह कल्पना भी नहीं कर सकते की इस्लाम छोड़ना एक विकल्प हो सकता है अथवा ऐसा संभव है। इसके स्थान पर वे सोचते हैं कि जिन लोगों ने इस्लाम छोड़ है वे यहूदियों के वैतनिक दलाल हैं। वे इस तथ्य को स्वीकार नहीं कर पाते कि जनता के पास सोचने समझने की स्वतंत्रता है तथा कुछ लोग ऐसा सोच सकते हैं कि इस्लाम उनके लिए नहीं है। मैंने इस्लाम निम्न कारणों से छोड़ा।

कुछ वर्ष पूर्व तक मैं ऐसा सोचता था कि मेरी इस्लाम में आस्था एक अंध भक्ति नहीं है बल्कि वर्षों की गवेषणा तथा शोध की परिणति है। यह सच है कि मैंने इस्लाम के ऊपर बहुत सी पुस्तकें पढ़ी हैं जो ऐसे लोगों ने लिखी हैं जिनके विचारों का मैं समर्थन करता हूँ तथा जो ऐसा दर्शन की बात करती हैं जो मुझे असहज नहीं करता। यह मेरे उस विश्वास की पुष्टि करता है कि मैंने सच को पा लिया है। मेरे पूर्वाग्रहग्रस्त शोध ने मेरी आस्था की पुष्टि की। अन्य मुसलमानों की

भांति मैं यह विश्वास करता था कि किसी भी ज्ञान की पूर्णता के लिए उसके स्रोत में जाना होता है। अब आप यह सोच सकते हैं कि इस्लाम का स्रोत कुरान तथा हदीस है। यह सैद्धांतिक रूप से सच है। परंतु यथार्थ यह है कि बहुत कम मुसलमान इन पुस्तकों को समझने के लिए पढ़ते हैं। मुसलमानों को इस्लाम के विषय में जानकारी, इस्लाम के विद्वानों द्वारा लिखी पुस्तकों से मिलती है। ये क्षमाप्रार्थी पुस्तकें धूर्तता से इस्लाम की अच्छी छवि दिखाती हैं तथा मुहम्मद को एक पवित्र व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करती हैं तथा कुरान को "वैज्ञानिक पुस्तक" सिद्ध करती हैं। इसलिए मुझे सत्य की खोज के लिए कहीं और जाने की आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि मैं आश्वस्त था कि मैंने पहले ही इसे पा लिया है; जैसा कि मुसलमान कहते हैं, "ज्ञान प्राप्ति के बाद, ज्ञान की खोज करना मूर्खतापूर्ण है।"

मुझे अब ऐसा लगता है कि यह एक भूल थी। यदि मैं खतरनाक पंथों में से किसी एक में सच्चाई ढूँढना चाहूँ? क्या उतना पर्याप्त है जो कुछ पंथिक नेता तथा उसके दिग्भ्रमित अनुचरों ने बताया है? क्या यह उचित नहीं होगा यदि मैं अपने शोध को व्यापक करूँ तथा यह जानूँ कि अन्य लोग उनके (कुरान तथा हदीस) बारे में क्या कहते हैं? स्रोत की ओर जाना, वैज्ञानिक विषयों में ही लाभप्रद होता है, क्योंकि वैज्ञानिक "विश्वासी" नहीं होते। वे अंधभक्त नहीं होते

इस कारण अंटशंट नहीं बकते। वैज्ञानिक आलोचनात्मक दृष्टि से साक्ष्यों का विश्लेषण करते हैं। यह मजहबी मार्ग से पूर्णतया भिन्न होता है जो आस्था तथा विश्वास पर आधारित होता है।

मेरा यह मानना है कि पाश्चात्य मानवीय मूल्यों से परिचित होने के कारण अधिक संवेदनशील हो गया तथा लोकतंत्र, विचारों की उन्मुक्त अभिव्यक्ति, मानवाधिकारों तथा समानता के लिए मेरी भूख और बढ़ गयी। यह वह समय था जब मैंने कुरान को दोबारा पढ़ा तथा मुझे ऐसे आदेश मिले जो मानवाधिकार के उन मूल्यों से आसपास भी नहीं जो अभी-अभी मैंने पश्चिमी देशों में रह कर सीखे थे। मैं अधोलिखित शिक्षाओं को पढ़कर दुखी तथा असहज हो गया:

कुरान 3/90

परंतु वे लोग जो दीन को स्वीकार करने के बाद छोड़ देते हैं तथा दीन के विरुद्ध कार्य करते जाते हैं-उनका प्रायश्चित कभी भी स्वीकार नहीं किया जाएगा; क्योंकि वे वह लोग हैं जो पथभ्रष्ट हो चुके हैं।

कुरान 16/106

कोई भी व्यक्ति जो अल्लाह का दीन स्वीकार करने के बाद, केवल विवशता की स्थिति में ही अविश्वासी होने के ढोंग करता है, उसका हृदय दीन में दृढ़ रहता है, परंतु ऐसे लोग जो अपना हृदय अविश्वास के लिए खोल देते हैं, उनके ऊपर अल्लाह का क्रोध बरसता है तथा उनके लिए भयंकर दण्ड है।

कोई व्यक्ति यह सोच सकता है कि उपरोक्त भयंकर दण्ड, परलोक से सम्बन्धित है। परंतु मुहम्मद ने यह सुनिश्चित कर लिया कि इन लोगों को यह दण्ड इस विश्व में भी मिले।

कुरान 9/14

युद्ध करो तथा अल्लाह उन्हें तुम्हारे हाथों से दण्ड देगा, उन्हें अपमानित करो, मैं उन पर विजय के लिए तुम्हारी मदद करूंगा तथा विश्वासी लोगों के हृदय की पीड़ा शांत करूंगा।

ऐसे अहदीस भी हैं जो स्पष्ट रूप से कहती हैं, "अतएव जहाँ कहीं भी उन्हें पाओ, कत्ल कर दो, क्योंकि कयामत के दिन ऐसे हत्यारों के लिए पुरस्कार प्रावधित है।"

सहीह बुखारी, खण्ड-4, पुस्तक-52, संख्या-260

अली ने कुछ लोगों को जला दिया तथा यह समाचार इब्न अब्बास के पास पहुँचा जिसने कहा, "यदि मैं उसके स्थान पर होता तो मैं इन लोगों को नहीं जलाता, क्योंकि रसूल अल्लाह ने कहा था, "किसी को वह दण्ड न दो जो अल्लाह देता है।" निस्संदेह मैं उनका कत्ल करता क्योंकि रसूल अल्लाह ने कहा था, "यदि कोई व्यक्ति अपना धर्म छोड़ देता है तो उसका कत्ल कर दो।"

मैंने मुहम्मद की क्रूरता की अनेक कहानियाँ सुनी थीं, दृष्टांत के लिए एक कहानी नीचे दी जा रही है:

सहीह बुखारी खंड-4, पुस्तक-52, संख्या-261

बनी उकील जाति के 8 पुरुष रसूल अल्लाह के पास आए तथा उन्हें मदीना की जलवायु अच्छी नहीं लगी। अतएव उन्होंने कहा, "हे रसूल अल्लाह! हमें कुछ दूध दीजिए।" रसूल अल्लाह ने कहा, "मैं तुम लोगों को सुझाव देता हूँ कि तुम लोग ऊंटों के चरवाहों के साथ कार्य करो।" अतएव वे लोग गए तथा उन्होंने ऊंट के दूध तथा

पेशाब का सेवन तब तक किया (एक औषधि के रूप में) जब तक कि वे स्वस्थ व हृष्टपुष्ट न हो गए। तब उन्होंने चरवाहे को मार डाला तथा ऊंटों को भगा ले गए तथा इस प्रकार वे मुसलमान से अविश्वासी अथवा काफ़िर बन गए। जब रसूल अल्लाह को एक व्यक्ति ने चीखते हुए यह सूचना दी तो रसूल ने कुछ लोगों को उनके पीछे भेजा तथा दोपहर से कुछ पहले उन्हें पकड़ कर रसूल अल्लाह के पास लाया गया जिसने उनके हाथ और पैर कटवा दिए। इसके बाद रसूल ने कीलों को गरम करके इन काफ़िरों की आँखों में ठोंक दिया तथा उन्हें मदीना के बाहर के हर्रा नामक चट्टानी इलाके में फेंक दिया। वे पानी माँग रहे थे परंतु किसी ने भी उन्हें पानी नहीं दिया और वे तड़प-तड़प कर मर गए।

सुन्नन अबू-दाऊद, पुस्तक-38, संख्या-4339

उम्मुल मोमिनीन आएशा ने कहा:

रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) ने कहा, "एक मुसलमान का कत्ल नहीं करना चाहिए, जो यह शहादा दे देता है कि मुहम्मद, अल्लाह का रसूल है, सिवाय तीन कारणों की उपस्थिति में: यदि विवाहित होते हुए भी उसने विवाहेतर सम्बन्ध बनाये, तो उसे पत्थर से मार-मार कर मार डालो; यदि कोई व्यक्ति अल्लाह तथा उसके

रसूल से लड़ने के लिए जाता है, तो उसकी हत्या कर दो अथवा उसे सलीब पर चढ़ा कर ठोंक दो अथवा राज्य से निष्कासित कर दो; यदि कोई व्यक्ति किसी की (अन्य मुसलमान की) हत्या करता है, उसका कत्ल कर दो।

जितना अधिक मैं पढ़ता जाता था उतना ही अधिक मैं मुहम्मद की न्यायप्रियता के विषय में संदेह करता जाता था। अधोलिखित उद्धरण अत्यंत विचलित करने वाला है। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि कोई भी इसे पढ़ेगा और फिर भी विचलित नहीं होगा तो उसे मानव बनने में अभी बहुत समय है।

सुन्नन अबू दाऊद, पुस्तक-38, संख्या-4348
अब्दुल्लाह इब्न अब्बास ने कहा:

एक अंधे व्यक्ति के पास एक गुलाम स्त्री थी जो रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) को अपशब्द कहती थी तथा उसकी शान में गुस्ताखी करती थी। उस व्यक्ति ने उसे रोका, परंतु वह नहीं रुकी। उसने उसे फटकार लगायी इसके बावजूद उस स्त्री ने अपनी आदत नहीं छोड़ी। एक रात्रि को वह रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) की बुराई कर रही थी तथा उसे अपशब्द कर रही थी। इस पर

तैश में आकर उस व्यक्ति ने खंजर उठाया तथा उसके पेट में घोंप दिया और उसे मार डाला। स्त्री का गर्भस्थ शिशु इस आघात से उसके पैरों के मध्य से निकल कर बाहर आ गया जो खून ले लथपथ था। जब सुबह हुई तो रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) को इसकी सूचना दी गयी।

उसने (रसूल अल्लाह मुहम्मद) लोगों को एकत्र किया तथा कहा: मैं अल्लाह की सौगंध खाकर कहता हूँ कि जिस व्यक्ति ने यह कार्य किया है तथा अल्लाह की सौगंध खाकर उस अल्लाह के द्वारा प्रदत्त अधिकार (रसूल होने के नाते) के तहत यह कहता हूँ कि वह व्यक्ति खड़ा हो जाए। उपस्थित भीड़ के मध्य वह व्यक्ति कांपता हुआ खड़ा हो गया।

फिर वह रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) के सामने आकर बैठ गया और कहा: हे रसूल अल्लाह! मैं उसका स्वामी हूँ, वह आपको गाली देती थी तथा आपको नीचा दिखाती थी। मैंने उसे मना किया, परंतु वह नहीं मानी तथा मैं उसे फटकार लगायी, परंतु उसने अपनी प्रवृत्ति पर अंकुश नहीं लगाया। मेरे उसके गर्भ से दो मोती जैसे पुत्र हैं तथा वह मेरी सहचरी थी। गत रात्रि उसने एक बार फिर आपको गाली देना तथा नीचा दिखाना शुरू किया। अतएव

मैंने खंजर उठाया तथा उसके पेट में घोंप दिया तथा खंजर को जोर से दबाकर उसे मार डाला।

इतना सुनने के बाद रसूल अल्लाह (उसके पर शांति हो) ने कहा: उपस्थित लोग इसके साक्षी रहें! उस स्त्री के खून के लिए किसी भी प्रकार का प्रतिशोध रूपी धन देने की आवश्यकता नहीं है। (उस स्त्री के रक्त को कोई मूल्य नहीं है)

मेरे विचार में उपरोक्त कथा एक स्पष्ट अन्याय है। मुहम्मद ने एक व्यक्ति को क्षमा कर दिया जिसने एक गर्भवती स्त्री का कत्ल कर दिया तथा साथ ही अपने एक अजन्मे शिशु का वध कर दिया केवल इसलिए कि उस स्त्री ने रसूल अल्लाह का अपमान किया था!

(अरब जाति के लोग अपनी नौकरानियों के साथ संसर्ग करते थे। कुरान ने इस प्रथा को और भी दृढ़ तथा स्थायी कर दिया। (कुरान: 33/52) मुहम्मद ने स्वयं मारियाह इब्न किबतिया के साथ बिना विवाह किए संसर्ग किया था, जो उसकी पत्नी हफ़्सा की नौकरानी थी।)

किसी व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति के कत्ल के लिए क्षमा कर देना, केवल इसलिए कि उसने मुहम्मद का अपमान किया था, स्वीकार्य नहीं है। यदि कातिल दण्ड से बचने के लिए झूठ बोल रहा है तो?

यह कहानी मुहम्मद की न्यायप्रियता के विषय में क्या बताती है? पिछले 1400 वर्षों से, कितने पतियों को, अपनी निर्दोष पत्नियों की हत्या के दण्ड से मुक्ति मिली होगी केवल यह कह कर कि उनकी पत्नियाँ रसूल अल्लाह की निंदा कर रहीं थीं? इस हदीस ने उन्हें दण्ड से बचने में मदद की।

एक अन्य हदीस का विवरण नीचे दिया जा रहा है:

सुन्नन अबू दाऊद, पुस्तक-38, संख्या 4349

अली इब्न अबू तालिब ने बताया:

एक यहूदी स्त्री रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) को अपशब्द कहती थी तथा उसे नीचा दिखाती थी। एक पुरुष ने उसे गला घोंट कर मार डाला। रसूल अल्लाह (उसके ऊपर शांति हो) ने यह घोषणा की कि उस स्त्री के रक्त का कोई प्रतिशोधात्मक मूल्य देने की आवश्यकता नहीं है। (उस स्त्री के रक्त को कोई मूल्य नहीं है)

ऐसा कहानी सुनने के बाद भी भावोद्रेक नहीं होना सरल नहीं है। कोई कारण नहीं कि हम यह मानें कि यह सारी कहानियाँ गढ़ी गयी हैं। ऐसा कैसे हो सकता है कि जो मोमिन अपने रसूल को ममतामय छवि में दिखाना चाहते हैं वे ऐसी असंख्य कहानियाँ गढ़ेंगे जो उसे एक निर्मम व क्रूर शासक के रूप में दिखाती हैं?

मुझे यह समझ में नहीं आता कि इस्लाम स्वीकार नहीं करने वालों के साथ निर्दयता का बर्ताव क्यों किया जाए अथवा जो किसी धर्म की आलोचना करते हैं उन्हें मृत्यु दण्ड क्यों दिया जाए। आस्था एक व्यक्तिगत विषय है।

हम एक अन्य उद्धरण में देखेंगे कि मुहम्मद अविश्वासी लोगों के साथ कैसा बर्ताव करता था:

सुन्नन अबू दाऊद, पुस्तक-38, संख्या-4359 अब्दुल्लाह इब्न अब्बास बताते हैं:

आयत, "जो लोग अल्लाह तथा उसके रसूल के विरुद्ध युगह करते हैं तथा अपनी शक्ति तथा सामर्थ्य से भूमि पर फ़साद फैलते हैं, उनकी सज़ा कत्ल है अथवा सलीब पर ठोंकना है अथवा हाथ व पैर विपरीत दिशाओं से काटना है अथवा भूमि से निष्कासित कर देना है.. अल्लाह अत्यंत दयालु है," वस्तुतः बहुदेववादियों के लिए

अवतरित हुई थी। यदि इनमें से कोई बंदी बनाए जाने से पूर्व पछतावा करता है तो भी वह नियत दण्ड से नहीं बच सकता जिसके वह योग्य है।

किस प्रकार एक व्यक्ति जो रसूल अल्लाह होने का दावा करता है अपनी जनता को यंत्रणा दे सकता है, सलीब पर ठोंक सकता है केवल इसलिए कि जनता उसे स्वीकार करने से इनकार कर रही है? क्या ऐसा व्यक्ति वास्तव में रसूल अल्लाह कहलाने लायक है? क्या कोई इस व्यक्ति से अधिक योग्य नहीं था जिसके नैतिक मूल्य तथा आचरण की दृढ़ता इतनी नहीं थी कि वह इस महान उत्तरदायित्व को नहीं निभा सके?

मेरे लिए यह स्वीकार करना और भी कठिन है कि मुहम्मद ने एक ही दिन में 900 यहूदियों का कत्ल कर दिया जब उसने उन्हें उनके गढ़ की 25 दिन की घेरेबंदी के बाद बंदी बना लिया था। मैंने अधोलिखित कथा पढ़ी और मेरा रोम-रोम कांप उठा:

सुन्नन अबू दाऊद, पुस्तक-38, संख्या-4390 अतिय्याह अल-क़ुराज़ी ने बताया:

मैं बनू कुरैजा के बंदियों में से था। मुहम्मद के सहाबियों ने हमारा परीक्षण किया तथा वे पुरुष जिनके यौनांगों में बाल आ चुके थे उन्हें

शेष लोगों से अलग करके कत्ल कर दिया गया। मैं उन बालकों में से था जिनके बाल नहीं आए थे।

इसके अतिरिक्त मुझे निम्नलिखित कहानी अत्यंत चौंकाने वाली लगी:

सुन्नन अबू-दाऊद, पुस्तक-38, संख्या-4396

जाबिर इब्न अब्दुल्लाह ने बताया:

एक चोर को मुहम्मद (उसके ऊपर शांति हो) के पास लाया गया। उसने (रसूल अल्लाह ने) कहा: उसे मार डालो। जनता ने कहा: उसने चोरी की है, रसूल अल्लाह! तब उसने कहा: उसके हाथ काट दो। इस प्रकार उसका दाहिना हाथ काट दिया गया। फिर उसे दोबारा चोरी करने के जुर्म में मुहम्मद के सामने लाया गया, मुहम्मद ने कहा: उसे मार डालो। जनता ने कहा: रसूल अल्लाह, उसने चोरी की है। तब उसने कहा, उसका पैर काट दो। फिर उसका बायाँ पैर काट दिया गया। फिर तीसरी बार उसे उसी जुर्म के चलते लाया गया। रसूल अल्लाह ने फिर कहा, उसे मार डालो। फिर जनता ने कहा: उसने चोरी की है, हे रसूल अल्लाह! अब रसूल अल्लाह ने कहा, उसके हाथ काट दो। इस प्रकार उसका बायाँ हाथ भी काट दिया गया। फिर उसे चौथी बार उसी जुर्म के चलते रसूल अल्लाह एक सम्मुख लाया गया जिन्होंने फिर कहा, उसे मार डालो। जनता

ने फिर कहा, रसूल अल्लाह, उसने चोरी की है। अतएव रसूल अल्लाह ने कहा, उसका पैर काट दो। इस प्रकार उसका दाहिना पैर भी काट दिया गया। फिर उसे पाँचवी बार उसी जुर्म के चलते लाया गया, अब रसूल अल्लाह ने कहा, उसे मार डालो। इस बार हम उसे ले गए और कत्ल कर दिया। कत्ल के बाद हम उसे एक कुएं (संभवतः सूखे कुएं में) पर ले गए तथा उसके शरीर के ऊपर पत्थर डाल दिए गए।

ऐसा प्रतीत होता है कि मुहम्मद बिना सोच विचार के अपना निर्णय सुना देता था। एक चोर के हाथ काट कर उसने चोर के लिए सिवाय भीख मांगने के और कोई रास्ता नहीं छोड़ा, जो कठिन था क्योंकि वह चोर के रूप में कुख्यात हो चुका था जिसके कारण लोग उससे घृणा करते थे। इस कारण जीवनयापन के लिए दोबारा वह वही अपराध करने के लिए विवश था।

पश्चिम में अनेक वर्षों तक रहने के बाद तथा अन्य धर्म के लोगों के तथा नास्तिकों के उदार व्यवहार का अनुभव प्राप्त करने के बाद, जिन्होंने मुझसे प्रेम किया तथा अपने मित्र के रूप में मुझे स्वीकार दिया, जिन्होंने अपने जीवन में तथा हृदय में प्रवेश करने दिया, मैं कुरान के निम्न अनुदेशों को अल्लाह के शब्द के रूप में अब और अधिक नहीं मान सकता:

कुरान 58/22

तुम्हें एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं मिलेगा जो अल्लाह तथा कयामत के दिन में विश्वास रखता हो और जिसने अल्लाह तथा उसके रसूल का विरोध करने वालों को मित्र बनाया।

कुरान 3/118-120

हे मोमिनों, अपने सलाहकारों, संरक्षकों, सहायकों तथा मित्र आदि के रूप में विधर्मियों (बहुदेववादी, यहूदी, इसाई, मुनाफिक) को मत लोग क्योंकि वे अपनी पूरी चेष्टा करेंगे कि तुम्हें पथभ्रष्ट कर दें। वे तुम्हें गंभीर क्षति पहुँचाना चाहते हैं। उनके मुख से घृणा प्रकट हो रही है, परंतु जो उनके हृदय में है वह और भी बुरा है। निश्चय ही हमने तुम्हारे सामने आयतें रख कर स्पष्ट कर दिया है, यदि तुम समझ सको। देखो, तुम तो उन्हें प्यार करते हो परंतु वे नहीं करते तथा तुम सभी पुस्तकों पर विश्वास रखते हो (अर्थात, तुम तौरात तथा इंजील पर विश्वास करते हो जब कि वे तुम्हारी पुस्तक (कुरान) पर अविश्वास करते हैं। जब वह तुमसे मिलते हैं तो वे कहते हैं, कि विश्वास करते हैं, परंतु जब वे अकेले होते हैं तो तुम्हारे प्रति इतना रोष करते हैं कि अपनी उंगली अपने ही दांतों से काट लेते हैं। उनको कोसते हुए कहो: अपने क्रोध में ही नष्ट हो जाओ। निश्चय ही

अल्लाह बेहतर जनता है कि उनके ह्रदय में क्या छुपा है। यदि तुम्हारा कुछ अच्छा होता है तो उन्हें दुख होता है, परंतु यदि तुम्हारे ऊपर कोई विपदा आती है तो वे उस पर हर्षित होते हैं।

तथा

कुरान 5/51

हे विश्वास करने वालों! यहूदियों तथा ईसाइयों को अपना औलिया (मित्र, संरक्षक, सहायक) नहीं बनाओ, वे केवल आपस में ही मित्र हैं।

मुझे भी उपरोक्त कथन मिथ्या लगे। इसका साक्ष्य बोस्निया-कोसोवो की विपदा है, जब एक ईसाई देश ने एक अन्य ईसाई देश के विरुद्ध युद्ध करके मुसलमानों को मुक्त किया। अनेक यहूदी डॉक्टर स्वेच्छा से कोसोवों के शरणार्थियों की सहायता के लिए आगे आए, बावजूद इस तथ्य के कि द्वितीय विश्व युद्ध में इन्ही अल्बानियन मुसलमानों ने हिटलर का साथ दिया था तथा यहूदियों के नरसंहार में उसकी पूरी मदद की थी।

मेरे सामने यह सत्य प्रकट हो चुका था कि मुसलमानों की विश्व के प्रत्येक समुदाय ने मदद की तथापि, हमारा रसूल यह चाहता है कि

हम उन सभी से घृणा करें, अपने आप को उनसे अलग कर लें, उन्हें अपनी जीवन पद्धति में ढालने की चेष्टा करें अन्यथा उन्हें मार डालें, ग़ुलाम अथवा धिम्मी बनाकर उनसे प्राण बख्शने के एवज़ में जज़िया वसूल करें। यह कितना मूर्खतापूर्ण तथा कितना घृणास्पद है! कितना अमानवीय है! आश्चर्य नहीं कि मुसलमानों में पश्चिम तथा यहूदियों के प्रति इतनी अधिक घृणा है। यह मुहम्मद ही था जिसने अपने अनुचरों में गैर-मोमिनों के प्रति इतनी घृणा तथा अविश्वास भर दिया था। अल्लाह की पुस्तक कुरान में अंतर्निहित इतनी घृणास्पद शिक्षाओं के साथ मुसलमान अन्य राष्ट्रों के साथ किस प्रकार एकीकृत हो सकते हैं?

अनेक मुसलमान, गैर-मुस्लिम देशों में उत्प्रवास करते हैं तथा वहाँ उनका दामन फैलाकर स्वागत किया जाता है। अनेक मुसलमान वहाँ की राजनीति में भी प्रविष्ट हो जाते हैं तथा प्रशासक वर्ग का हिस्सा बन जाते हैं। हमें गैर-मुस्लिम राष्ट्रों में किसी भी प्रकार के भेदभाव का सामना नहीं करना पड़ता। परंतु देखो, किस प्रकार हमारे पवित्र रसूल अल्लाह हमसे कह रहे हैं कि हमें गैर-मुस्लिमों के साथ कैसा बर्ताव करना चाहिए, यदि हम बहुसंख्या में हों तथा वे अल्पसंख्यक हों।

कुरान 9/29

“उन लोगों से युद्ध करो जो अल्लाह में विश्वास नहीं रखते, न ही कयामत के दिन में विश्वास रखते हैं, न ही उस वस्तु को निषिद्ध करते हैं जो अल्लाह तथा उसके रसूल ने निषिद्ध की है, जो पुस्तकों पर विश्वास रखने के बावजूद (अर्थात ईसाई व यहूदी) सच्चे धर्म को मान्यता नहीं देते हैं, जब तक कि वे सर झुका कर जज़िया देने के लिए तैयार न हो जाएं तथा स्वयं को दलित न अनुभव करें।”

मैंने निम्नलिखित आयतों को भी अपने विवेक के बहुत विपरीत पाया। मैंने प्रत्येक मानव जाति से प्रेम किया है तथा मैं विश्व के प्रत्येक मनुष्य की खुशी चाहता हूँ तथा उन्हें परलोक में क्षमा करना चाहता हूँ। परंतु मेरे पवित्र रसूल अल्लाह ने मुझसे यह आग्रह किया कि मैं गैर-मोमिनों के लिए क्षमा की विनती न करूँ यदि वे मेरे माता-पिता अथवा प्रियजन हों तो भी।

कुरान 9/113 *“यह रसूल अल्लाह के लिए तथा मोमिनों के लिए उचित नहीं है कि वे मुशरिकों के लिए क्षमायाचना करें, चाहे वे उनके सम्बन्धी ही क्यों न हों, क्योंकि यह जाहिर हो गया है कि वे अग्नि के निवासी हैं। (क्योंकि उनकी मृत्यु अविश्वास में हुई है)*

(मोहसिन का अनुवाद)

कुरान और हदीस इस प्रकार की हिंसक व अपमानजनक आयतों से भरी हुई हैं। मेरे विचार में यह अब इस बात का प्रमाण हैं कि मुहम्मद, अल्लाह का रसूल नहीं था वरन एक पंथिक नेता था। पंथिक नेता अपने अनुचरों से अपने परिवारों की निंदा करने के लिए कहते हैं। वह एक ढोंगी था जो इतनी बेशर्मी से तथा इतनी प्रबलता से झूठ बोलता था कि उसके समय के अज्ञानी लोग उसकी बातों पर विश्वास कर लेते थे। फिर बाद वाली पीढ़ियाँ इन्हीं मिथ्या आयतों को आत्मसात करती हुई उन्हें आगे की पीढ़ी को प्रेषित करती थी। झूठ के इसी वातावरण में दार्शनिकों तथा लेखकों का जन्म हुआ था जिन्होंने इस झूठ को और अधिक व्यापकता दी, अलंकृत किया तथा विश्वसनीय बनाया। परंतु जब आप धर्म के मूल तत्व की ओर जाते हैं तथा कुरान पढ़ते हैं तो आप देखते हैं कि इन आयतों में केवल विशुद्ध निरर्थक बातों के सिवा और कुछ नहीं है।

रूमी एक महान कवि तथा सूफ़ी था, जिसने इस्लामी को राहस्यवादी बनाने की चेष्टा की जो इसमें नहीं थी। परंतु रूमी ने जो कुछ भी कहा वह रूमी की अपनी सोच थी। कुरान में रहस्यवाद जैसा कुछ भी नहीं है। धर्म तथा ईश्वर के विषय में मुहम्मद की अवधारणा अत्यंत आदिम थीं। रूमी, अत्तार, सोहरावर्दी तथा अन्य रहस्यवादी सूफियो ने कुरान की निरर्थक आयतों को कुछ अर्थ देने की चेष्टा की,

इसका कारण उनका एक मुस्लिम परिवार में पालन-पोषण होना था। जहाँ वे अर रिजवी जैसे अधिक तार्किक चिंतक की भांति इस्लाम को पूरी तरह से त्याग नहीं सकते थे क्योंकि यह उनके अवचेतन में रचा बसा था। मजहब से छुटकारा पाना बहुत कठिन कार्य है। यह एक बहुत शक्तिशाली मादक द्रव्य की भांति होता है यदि इसका सेवन बाल्यकाल से किया जाए। तथापि, इन बुद्धिमान पुरुषों के लिए यह संभव नहीं था कि वे कुरान के शाब्दिक अर्थ को यों ही स्वीकार कर लें। इस कारण उन्होंने कुरान की मूर्खतापूर्ण आयतों के गुप्त अर्थों को खोजने की चेष्टा की तथा इन लोगों ने एक नए धर्म को जन्म दिया जिसका मुहम्मद की शिक्षाओं से कुछ भी लेनादेना नहीं था। तथापि, यह मजहब इन विद्वानों के लिए रुचिकर बना रहा।

इस प्रकार हमारे पर दो इस्लाम हैं-एक जो कुरान की स्पष्टतः मूर्खतापूर्ण आयतों को श्रमपूर्वक रहस्यवादी लक्षणों से अलंकृत करता है, जिसका अभ्यास सूफ़ी करते हैं तथा दूसरा इस्लाम वह है जो इन आयतों के शाब्दिक अर्थ के अतिरिक्त किसी अन्य अर्थ को रद्द करता है जिसका अभ्यास अधिकांश मुसलमान करते हैं जिसकी नाभि सऊदी अरब के वहाबियों में है। यथार्थ में इन दो अन्त्य पंथों के मध्य अनेक अन्य असंख्य पंथ हैं जिनमें से प्रत्येक कुरान की

अपनी रुचि व हठ के अनुसार व्याख्या करता है तथा एक पंथ दूसरे पंथ को मुरतद (धर्मच्युत) कहता है तथा पारस्परिक संघर्ष करता रहता है ताकि अपने विशुद्ध इस्लाम को अन्य मुस्लिमों के ऊपर थोप सके।

तथापि, **वास्तविक इस्लाम वह नहीं है जो इसके दार्शनिक तथा सूफ़ी रहस्यवादी संत परिभाषित करते हैं, परंतु यह वह है जो कुरान में है तथा यह इस्लामी मूलवादियों तथा आतंकवादियों का इस्लाम है। वास्तविक इस्लाम वह है जो स्त्रियों के साथ निंदनीय आचरण करता है, जो पतियों को अनुमति देता है कि वे अपनी पत्नियों को पीट सकें, जो धार्मिक अल्पसंख्यकों पर दंडात्मक जज़िया कर लगाता है, जो गैर-मुस्लिमों को कुचल कर विश्व का प्रभुत्व प्राप्त करना चाहता है, जो जिहाद का तथा काफ़िरों की हत्या का आह्वान करता है जब तक कि इस्लाम पूरे विश्व में एकमात्र प्रभुत्वशाली धर्म न रह जाए।**

मैंने इस्लाम को इसलिए रद्द नहीं किया कि मैंने मुसलमानों का बुरा आचरण देखा, बल्कि पवित्र समझी जाने वाली पुस्तक की बुरी शिक्षाओं के कारण तथा इसके संस्थापक के कुत्सित कृत्यों के कारण मैंने ऐसा किया। शताब्दियों से, मुसलमानों द्वारा अमल में लाए गए क्रूरता तथा वीभत्स हिंसा के कृत्य कुरान तथा सुन्नाह (रसूल अल्लाह का अपना आचरण) से प्रेरित हैं। यही कारण है कि **मैं मुसलमानों के**

कुकृत्यों के लिए इस्लाम को दोषी मानता हूँ। इस्लाम में मानवता खोजना अथवा इसे मानवीय बनाने की चेष्टा करना व्यर्थ है। किसी भी सुधार में सबसे बड़ी बाधा क़ुरान है। इस्लाम एक शत्रु है तथा वह मेरे आक्रमण का लक्ष्य है। मैं ऐसा करता हूँ बावजूद इस तथ्य के कि इस कारण मैं कट्टर व धर्मांध मुसलमानों की घृणा का पात्र हूँ तथा मेरा अपना जीवन खतरे में हो सकता है। तथापि, मैं यह जानता हूँ कि इस्लाम के उन्मूलन के बाद ही हम विश्व को एक विध्वंस से बचा सकते हैं जिसका खतरा अन्यथा हमारे सर के ऊपर मंडरा रहा है तथा जिसके कारण होने वाला विनाश प्रथम दो विश्वयुद्धों में होने वाले कुल विनाश से भी अधिक होगा। इस्लाम के उन्मूलन का निहितार्थ मानवता के मध्य शांति तथा सभ्यता तथा मुस्लिम विश्व में लोकतंत्र तथा समृद्धि की पुनर्स्थापना है।